ಕರ್ನಾಟಕ ರಾಜ್ಯ ಮುಕ್ತ ವಿಶ್ವವಿದ್ಯಾನಿಲಯ
ಮುಕ್ತಗಂಗೋತ್ರಿ, ಮೈಸೂರು-೫೭೦ ೦೦೬

KARNATAKA STATE OPEN UNIVERSITY
Mukthagangotri, Mysore - 570 006.

हिन्दी भाषा का इतीहास और हिन्दी भाषा विज्ञान

M.A. FINAL HINDI

COURSE / PAPER – III

BLOCK – 1

ಉನ್ನತ ಶಿಕ್ಷಣಕ್ಕಾಗಿ ಇರುವ ಅವಕಾಶಗಳನ್ನು ಹೆಚ್ಚಿಸುವುದಕ್ಕೆ ಮತ್ತು ಶಿಕ್ಷಣವನ್ನು ಪ್ರಜಾತಂತ್ರೀಕರಿಸುವುದಕ್ಕೆ ಮುಕ್ತ ವಿಶ್ವವಿದ್ಯಾನಿಲಯ ವ್ಯವಸ್ಥೆಯನ್ನು ಆರಂಭಿಸಲಾಗಿದೆ.

ರಾಷ್ಟ್ರೀಯ ಶಿಕ್ಷಣ ನೀತಿ 1986

The Open University System has been initiated in order to augment opportunities for higher education and as instrument of democrating education.

National Educational Policy 1986

ವಿಶ್ವ ಮಾನವ ಸಂದೇಶ

ಪ್ರತಿಯೊಂದು ಮಗುವು ಹುಟ್ಟುತ್ತಲೇ – ವಿಶ್ವಮಾನವ, ಬೆಳೆಯುತ್ತಾ ನಾವು ಅದನ್ನು 'ಅಲ್ಪ ಮಾನವ'ನನ್ನಾಗಿ ಮಾಡುತ್ತೇವೆ. ಮತ್ತೆ ಅದನ್ನು 'ವಿಶ್ವಮಾನವ'ನನ್ನಾಗಿ ಮಾಡುವುದೇ ವಿದ್ಯೆಯ ಕರ್ತವ್ಯವಾಗಬೇಕು.

ಮನುಜ ಮತ, ವಿಶ್ವ ಪಥ, ಸರ್ವೋದಯ, ಸಮನ್ವಯ, ಪೂರ್ಣದೃಷ್ಟಿ ಈ ಪಂಚಮಂತ್ರ ಇನ್ನು ಮುಂದಿನ ದೃಷ್ಟಿಯಾಗಬೇಕಾಗಿದೆ. ಅಂದರೆ, ನಮಗೆ ಇನ್ನು ಬೇಕಾದುದು ಆ ಮತ ಈ ಮತ ಅಲ್ಲ; ಮನುಜ ಮತ. ಆ ಪಥ ಈ ಪಥ ಅಲ್ಲ ; ವಿಶ್ವ ಪಥ. ಆ ಒಬ್ಬರ ಉದಯ ಮಾತ್ರವಲ್ಲ; ಸರ್ವರ ಸರ್ವಸ್ತರದ ಉದಯ. ಪರಸ್ಪರ ವಿಮುಖವಾಗಿ ಸಿಡಿದು ಹೋಗುವುದಲ್ಲ; ಸಮನ್ವಯಗೊಳ್ಳುವುದು. ಸಂಕುಚಿತ ಮತದ ಆಂಶಿಕ ದೃಷ್ಟಿ ಅಲ್ಲ; ಭೌತಿಕ ಪಾರಮಾರ್ಥಿಕ ಎಂಬ ಭಿನ್ನದೃಷ್ಟಿ ಅಲ್ಲ; ಎಲ್ಲವನ್ನು ಭಗವದ್ ದೃಷ್ಟಿಯಿಂದ ಕಾಣುವ ಪೂರ್ಣದೃಷ್ಟಿ.

ಕುವೆಂಪು

Gospel of Universal Man

Every Child, at birth, is the universal man. But, as it grows, we trun it into "a petty man". It should be the function of education to turn it again into the enlightened "universal man".

The Religion of Humanity, the Universal Path, the Welfare of All, Reconciliation, the Integral Vision - these ***five mantras*** should become View of the Future. In other words, what we want henceforth is not this religion or that religion, but the Religion of Humanity; not this path or that path, but the Universal Path; not the well-being of this individual or that individual, but the Welfare of All; not turning away and breaking off from one another, but reconciling and uniting in concord and harmony; and above all, not the partial view of a narrow creed, not the dual outlook of the material and the spiritual, but the Integral Vision of seeing all things with the eye of the Divine.

Kuvempu

द्वितीय एम.ए. - कोर्स तीन

Course - III, Paper - III

1 'हिन्दी भाषा का इतिहास और हिन्दी भाषा विज्ञान'

'हिन्दी भाषा विज्ञान'

Unit No. 1 to 4 **Page No.**

अनुक्रमणिका

इकाई 1	भाषा की परिभाषा और प्रकृति, संवहन माध्यम एवं उसका महत्व	1 - 48
इकाई 2	भाषा के विभिन्न रूप, भाषा और बोली	49 - 86
इकाई 3	भाषा की उत्पत्ति से संबंधित सिद्धांत	87 - 128
इकाई 4	विश्व की भाषाओं का वर्गीकरण एवं आकृतिमूलक वर्गीकरण	129 - 156

पाठ्यक्रम अभिकल्प तथा संपादकीय समिति

प्रो. एम.जी. कृष्णन्
उप–कुलपति तथा अध्यक्ष
कर्नाटक राज्य मुक्त विश्वविद्यालय
मैसूर–६

प्रो. एस.एन. विक्रर्म राज अरर्स
डीन (शैक्षणिक) - संयोजक
क.रा.मु.वि.विद्यानिलय
मैसूर - 6

बी.जी.चन्द्रलेखा संयोजिका
पुर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग,
क. रा. मु. वि. विद्यानिलय,
मानस गंगोत्री
मैसूर – ६.

पाठ्यक्रम के लेखक तथा संपादक

डॉ.सरगु कृष्णमूर्ति
निवृत्त प्रोफेसर, हिन्दी विभाग
बेंगलूर विश्वविद्यानिलय
बेंगलूर - 560 054.

कर्नाटक राज्य मुक्त विश्वविद्यानिलय, मैसूर, शैक्षणिक अनुभाग द्वारा निर्मित । सभी अधिकार सुरक्षित । कर्नाटक राज्य मुक्त विश्वविद्यानिलय से लिखित अनुमति प्राप्त किए बिना, इस कार्य के किसी भी अंश को किसी भी रूप में अनुलिपित या किसी अन्य माध्यम द्वारा प्रतिकृति नहीं किया जाएगा ।

कर्नाटक राज्य मुक्त विश्वविद्यानिलय के पाठ्यक्रम पर अधिक जानकारी विश्वविद्यानिलय के कार्यालय, मानस गंगोत्री, मैसूर- 6 से प्राप्त की जा सकती है ।

कर्नाटक राज्य मुक्त विश्वविद्यानिलय की ओर से
मुद्रित व प्रकाशित ।

ब्लाक परिचय

प्रिय विद्यार्थी,

कोर्स - एक में आपने प्राचीन हिन्दी काव्य के बारे में अध्ययन किया और सविस्तार रूप से जानकारी भी प्राप्त कर लीं और **कोर्स - दो** के अंतर्गत आपने तुलसीदास, सूरदास, केशवदास, घनानंद तथा बिहारी के व्यक्तित्व और कृतित्व और उनसे विरचित काव्य, बाल्य-जीवन इत्यादि के बारे में जानकारी प्राप्त कर लीं ।

अब आप **कोर्स - तीन** में **हिन्दी भाषा का इतिहास** और **हिन्दी भाषा विज्ञान** के बारे में अध्ययन करेंगे और सविस्तार रूप से जानकारी भी प्राप्त करेंगे ।

अब आप **ब्लाक - एक** में भाषा की परिभाषा और प्रकृति, संवहन माध्यम एवं उसका महत्व, भाषा के विभिन्न रूप, भाषा और बोली, भाषा की उत्पत्ति से संबंधित सिद्धांत, विश्व की भाषाओं का वर्गीकरण एवं आकृतिमूलक वर्गीकरण के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे ।

शुभकामनाओं के साथ,

डॉ. कांबले अशोक
अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
क.रा.मु.विश्वविद्यानिलय,
मानस गंगोत्री, मैसूर – ६.

इकाई एक : भाषा की परिभाषा और प्रकृति, संवहन माध्यम एवं उसका महत्व

इकाई की रूपरेखा

1.0. प्रस्तावना

1.1. उद्देश्य

1.1.1. पठनीय अंश

1.2. भाषा का महत्व

1.2.1. भाषा के महत्व के संबंध में भर्तृहरि का मंतव्य

1.3. भाषा का अर्थ

1.3.1. पशु आदि की बोली

1.3.2. इंगित

1.3.3. संकेत-चिह्न या सांकेतिक भाषा

1.3.4. मानवीय व्यक्त भाषा

1.4. भाषा का व्यापक अर्थ

1.4.1. भाषा शब्द के दो अर्थ

1.5. भाषा की परिभाषा

1.5.1. भाषा की परिभाषा

1.5.2. पाणिनि का मत

1.5.3. पतंजलि द्वारा प्रदत्त परिभाषा

1.5.4. भर्तृहरि द्वारा प्रदत्त परिभाषा

1.5.5. डॉ.हरीश शर्मा द्वारा प्रदत्त भाषा की परिभाषा

1.5.6. डॉ.बाबूराम सक्सेना द्वारा प्रदत्त परिभाषा

1.5.7. श्री दुनीचंद द्वारा प्रदत्त भाषा की परिभाषा

1.5.8. श्री किशोरीदास वाजपेयी द्वारा प्रदत्त परिभाषा

1.5.9. डॉ.पी.डी. गुणे द्वारा प्रदत्त परिभाषा

1.5.10. श्री कामता प्रसाद गुरु द्वारा प्रदत्त परिभाषा

1.5.11. विश्व की सर्वश्रेष्ठ संपत्ति भाषा - तारापुरेवाल का मत

1.5.12. श्री नलिनीमोहन सन्याल द्वारा प्रदत्त भाषा की परिभाषा

1.5.13. डॉ.द्वारिका प्रसाद सस्केसना द्वारा प्रदत्त परिभाषा

1.5.14. डॉ.सरयू प्रसाद अग्रवाल द्वारा प्रदत्त भाषा की परिभाषा

1.5.15. श्री मंगलदेव शास्त्री द्वारा प्रदत्त भाषा की परिभाषा

1.5.16. डॉ.श्याम सुंदर दास की भाषा की परिभाषा

1.5.17. श्री बालकृष्ण भारद्वाज द्वारा प्रदत्त भाषा की परिभाषा

1.5.18. डॉ.भोलानाथ तिवारी द्वारा प्रदत्त भाषा की परिभाषा

1.5.19. 'भाषा विज्ञान की भूमिका' ग्रंथ में प्रदत्त परिभाषा

1.5.20. 'भाषा विज्ञान और हिन्दी भाषा' ग्रंथ में प्रदत्त भाषा की परिभाषा

1.5.21. प्लॉटो की परिभाषा

1.5.22. प्लान व ट्रेचर की परिभाषा

1.5.23. एन्साइक्लोपिडिया में प्रदत्त परिभाषा

1.5.24. जेस्पर्सन द्वारा प्रदत्त परिभाषा

1.5.25. डॉ.जो वांद्रियैज द्वारा प्रदत्त परिभाषा

1.5.26. बी.ब्लोच एवं जी.एल.ड्राइगर

1.5.27. क्रोसे की परिभाषा

1.5.28. हेनरी स्वीट द्वारा प्रदत्त परिभाषा

1.5.30. स्टुटवट ट्राप प्रदत्त परिभाषा

1.5.31. एडवर्ड शपिर द्वारा प्रदत्त परिभाषा

1.5.32. एड़विन घौस द्वारा प्रदत्त परिभाषा

1.5.33. मैक्समूलर द्वारा प्रदत्त भाषा की परिभाषा

1.5.34. डॉ.ज्ञानराज काशीनाथ गायकवाड़ की परिभाषा

1.6. भाषा की प्रकृति एवं विशषताएँ

1.6.1. भाषा की प्रकृति : डॉ.मिताली जी का मत

1.6.2. भाषा की प्रकृति में समुद्रगुण है

1.6.3. भाषा स्थूलता से सूक्ष्मता की ओर जाती है

1.6.4. भाषा अप्रौढ़ता से प्रौढ़ता की दिशा में जाती है

1.6.5. भाषा की धारा कठिनता से सरलता की ओर
जाती है

1.6.6. भाषा संयोगावस्था से वियोगावस्था की ओर जाती है

1.6.7. भाषा का अर्जित वस्तु है

1.6.8. विविधता अथवा अनेकता के साथ एकता और स्थिरता

1.6.9. डॉ.कपिलदेव द्विवेदी का मत

1.6.10. भाषा का कोई अंतिम रूप नहीं होता

1.6.11. भाषा की भौगोलिक सीमा होती है

1.6.12. भाषा की ऐतिहासिक सीमा भी होती है

1.6.13. भाषा गतिशील होती है : ऋग्वेद

1.6.14. भाषा सहज एवं स्वाभाविक क्रिया है

1.6.15. निरंतर रूप से परिवर्तनशील है

1.6.16. भाषा की परिवर्तनशीलता के संबंध में डॉ.मिताली जी के विचार

1.6.17. भाषा का मौखिक रूप पहले परिवर्तित होता है

1.6.18. उच्चरित भाषा में संभाव्य परिवर्तन के संबंध में डॉ.कपिलदेव के विचार

1.6.19. उच्चरित रूप मे पारेवर्तन

1.6.20. डॉ.कपिलदेव एवं डॉ.मिताली भट्टाचारजी

1.6.21. प्रत्येक भाषा की संरचना पृथक् होती है

1.6.22. भाषा सर्वतंत्र स्वतंत्र होती है

1.6.23. भाषा स्थिरीकरण से प्रभावित होती है श्री होनरजी राव शंभूकारी

1.6.23.1. डॉ.कपिलदेव के अनुसार भाषा की विरोधी शक्तियों का परिणाम

1.6.24. भाषा का मूल रूप वाक्य है, पद केवल व्यावहारिक है

1.6.25. भाषा परंपरागत गुण है

1.6.26. अनुकरण की प्रधानता

1.6.27. भाषा अनुकरण व व्यवहार से अर्जित की जाती है

1.6.28. पाणिनी और पतंजलि का मत

1.6.29. भाषार्जन के संबंध में आचार्य जगदीश के विचार

1.6.30. भाषा नित्य नूतन है व चिर पुरातन है

1.6.31. प्रतीकात्मक या सांकेतिक ध्वनियों का प्रयोग

1.6.32. भाषा के स्वरूप के संबंध में डॉ.कपिलदेव के विचार

1.6.33. स्वेच्छागत यादृच्छिक वाग्ध्वनियों की समृद्धि

1.6.34. डॉ.ज्ञानराज काशीनाथ गायकवाड़ के विचार

1.6.35. भाषा का ध्वनिमय रूप ध्वनि प्रतीकों पर आधारि होता है

1.6.36. भाषा के ध्वनिप्रतीक यादृच्छिक होते हैं -- डॉ.गायकवाड़ के विचार

1.6.37. भाषा का अपना एक मानक रूप भी बना रहता है

1.6.38. एक ही भाषा व्यवहार में विविध रूपों में प्रचलित रहती है - डॉ.ज्ञानराज के विचार

1.7. मानव-जीवन में भाषा का स्थान

VOP - १२ - 140

1.7.1. सामाजिक सम्पत्ति

1.7.2. भाषा मानवता की पूँजी है - डॉ.कपिलदेव

1.7.3. भाषा के कर्तृत्व, धर्तृत्व और हर्तृत्व के संबंध में डॉ.कपिलदेव का मत

1.7.4. भाषा सदसद् बोधिका है

1.7.5. श्री टी.एस.तुकाराम रामप्रिय का मत - भाषा की जीवनोद्धार प्रक्रिया के संबंध में

1.7.6. सामाजिक दृष्टि से भाषा के प्रमुख उपयोग

1.7.7. भाषा मानव-जीवन की समन्वय जोति है

1.7.8. भाषा की शक्ति संपन्नता के बारे में डॉ.मिताली भट्टाचारजी का मत

1.7.9. भाषा की सर्वव्यापकता के संबंध में डॉ.कपिलदेव द्विवेदी का मत

1.7.10. आचार्य भर्तृहरि का मत

1.8. भाषा संवहन का माध्यम है - डॉ.मिताली भट्टाचार जी का मत

1.8.1. भाषा मानव की मानसिक शक्ति के विकास की परिचायिका एवं संवहन माध्यम है

1.8.2. भाषा की संवहन शक्ति के संबंध में डॉ.कपिलदेव का मत

1.8.3. संवहन माध्यम के रूप में भाषा का व्यवहार

1.8.3.1. व्यक्ति का भाषा प्रयोग स्वकीयार्थ

1.8.3.2. व्यक्ति-व्यक्ति

1.8.3.3. व्यक्ति-समाज

1.9. भाषा की विशेषताएँ

1.9.1. प्रो.सर हॉकेट के विचार

1.9.2. भाषा के विराट स्वरूप के संबंध में डॉ.मिताली भट्टाचारजी का मत

1.9.3. शतपथ ब्राह्मण व यजुर्वेद के मत

1.9.4. भाषा सर्वोत्तम ज्योति है

1.10. निष्कर्ष

1.11. सारांश

1.12. बोध प्रश्न

1.13. उत्तर के अंश - अभ्यास के प्रश्नों के संबंध में

1.14. शब्दावली

1.15. संदर्भ ग्रंथ एवं निबंध

1.0. प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में आप सामान्य भाषा विज्ञान के पठनीय अंश, यथा- भाषा, भाषा की प्रकृति एवं भाषा के महत्व के विभिन्न तत्वों का ज्ञान हासिल करेंगे । भाषा की विभिन्न परिभाषाओं की जानकारी इस इकाई में आपको प्राप्त होती है । इस में आप इस तथ्य से अवगत होंगे कि भाषा मानव की सर्वश्रेष्ठ संपत्ति है । अनादि अनंत काल से प्राप्त ज्ञान-विज्ञान की संपत्ति मानव भाषा रूपी सर्वोत्तम साधन के माध्यम से पीढ़ी दर पीढ़ी को देता आया है । इस इकाई में आप भाषा की प्रकृति की विभिन्न विशेषताओं से परिचित होंगे । आप यह भी जानेंगे कि भाषा परिवर्तनशील है । संवहन माध्यम के रूप में भाषा युग-युग के ज्ञान-विज्ञान के अपार अमृत भंडार को मनुष्य जाति को प्रदान कर रही है । मानव-जीवन में भाषा सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थान की अधिकारिणी है । भाषा की प्रकृति एवं विशेषताओं का ज्ञान हासिल कर आप भाषा-सागर के रम्य रत्न प्राप्त कर सकेंगे ।

1.1. उद्देश्य

भाषा से संबंधित विभिन्न आयामों का परिचय देकर पाठकों को संसार की भाषाओं की विभिन्न विशेषताओं से अवगत कराना प्रस्तुत ग्रंथ का प्रमुख उद्देश्य है । भाषा विज्ञान अत्यंत महत्वपूर्ण विषय बनता जा रहा है । भाषा विज्ञान की विभिन्न शाखाओं में भाषा की उत्पत्ति एवं विकास का सर्वांगीण विवरण दिया जाता है । विभिन्न घटकों में विभक्त प्रस्तुत अध्ययन में हम भाषा विज्ञान से संबंधित अंशों का अध्ययन करने जा रहे हैं । इस अध्ययन की पंद्रह इकाइयों में भाषा की विशेषताएँ, भाषा विज्ञान के विभिन्न अंग आदि अंशों पर प्रकाश डाला जायेगा । भाषा विज्ञान के तत्वों का पूर्ण ज्ञान प्रदान कर छात्र बंधुओं को भाषा विज्ञान में निष्णात बनाना ही इस रचना का उद्देश्य है । भाषा की प्रकृति, मानव जीवन में भाषा का स्थान, ज्ञान-विज्ञान की संवाहिका के रूप में

भाषा का महत्व आदि के विवेचन का एक लक्ष्य यह भी है कि छात्र इस क्षेत्र में निपुण बनें जिससे कि भाषा संबंधी संपूर्ण ज्ञान हासिल कर ज्ञान की संपत्ति प्राप्त कर सकें । भाषा विज्ञान में जो प्रवीण बनता है, वह भाषा के साधु एवं असाधु रूपों से अवगत होता है तथा अपने इस ज्ञान भंडार से समूचे समाज को उपकृत करता है । विश्व की भाषाओं का परिचय भाषा विज्ञान से ही संप्राप्त होता है ।

1.1.1. पठनीय अंश

भाषा एवं भाषा विज्ञान का क्षेत्र इतना व्यापक है कि एक कृति के अंतर्गत उससे संबंधित सभी अंशों का आकलन करना अत्यंत कठिन है । बिंदु-सिंधु-न्याय में कतिपय मुख्य अंशों का विवेचन यहाँ किया जायेगा । सामान्य भाषा विज्ञान के प्रमुख एवं निर्धारित विषय निम्नलिखित हैं - भाषा की परिभाषा, भाषा की प्रकृति, भाषा का महत्व, भाषा के विभिन्न रूप, भाषा और बोली, भाषा की उत्पत्ति से संबंधित विभिन्न सिद्धांत, विश्व की भाषाओं का वर्गीकरण, ध्वनिविज्ञान, ध्वनियों का वर्गीकरण, ध्वनिग्राम शास्त्र, ध्वनि-परिवर्तन, उसके कारण, ध्वनि नियम, रूपरचना शास्त्र, अर्थविज्ञान, लिपिविज्ञान, देवनागरी लिपि, भारत एवं पाश्चात्य देशों में घटित भाषा विज्ञान की प्रगति आदि । विभिन्न आचार्यों द्वारा प्रणीत ग्रंथों में उपलब्ध सामग्री इसमें सम्मिलित की जा रही है । ये विषय भाषा से संबंधित वैज्ञानिक विषय होने के कारण इसमें सभी विद्वान एक ही प्रकार के शब्दों एवं वाक्यों का प्रयोग करते हैं । छात्र बंधु भी इस मधुसंचय कार्य से ज्ञान संप्रवर्धन में लाभान्वित होंगे । 'भाषा विज्ञान और हिन्दी भाषा' ग्रंथ के कई अंश इस घटक में गृहीत हैं । डॉ. कपिलदेव द्विवेदी, डॉ. ज्ञान राज काशीनाथ गायकवाड़ आदि के ग्रंथों से भी सहायता ली गयी है ।

1.2. भाषा का महत्व

भाषा मानव के मन व मस्तिष्क की अभिव्यक्ति का सर्वोच्च माध्यम है ।

1.2.1. भाषा के महत्व के संबंध में भर्तृहरि का मंतव्य

प्रसिद्ध नीतिज्ञ तथा वैयाकरण आचार्य भर्तृहरि कहते हैं कि संसार में ज्ञात कोई ऐसा विषय नहीं है, जो शब्द का आश्रय न लेता हो । समस्त ज्ञान शब्द से ही उत्पन्न हुआ भाषित होता है ।

1.3. भाषा अभिव्यक्ति का साधन है

भाषा शब्द का प्रयोग कई अर्थों में किया जाता है । भाषाभिव्यक्ति के सभी साधनों को भाषा का नाम दिया जाता है । पशु-पक्षि की बोली, इंगित, विभिन्न संकेत और मानव की भाषा को भाषा शब्द के द्वारा ग्रहण किया जाता है ।

1.3.1. पशु आदि की बोली

पशु पक्षियों की बोली के लिए भी भाषा शब्द का प्रयोग किया जाता है, जैसे - कुत्तों की भाषा, बंदरों की भाषा । पशु-पक्षीयों विभिन्न संकेतों से अपने मनोभावों को प्रकट करते हैं ।

1.3.2. इंगित

इंगित को भी भाषा कहा जाता है । हाथ, आँख, सिर आदि के हिलाने के द्वारा विभिन्न अर्थों की अभिव्यक्ति की जाती है । आँखों के इशारे से चलने आदि का संकेत होता है । इस प्रकार के आंगिक संचालन या इंगित को भी भाषा कहा जाता है ।

1.3.3. संकेत-चिह्न या सांकेतिक भाषा

स्कॉउट, सैनिक, नाविक आदि झण्डे की सहायता से दूरस्थ साथियों को विभिन्न संकेत भेजते हैं । तार व बेतार की भाषा को भी सांकेतिक भाषा कहा जाता है ।

1.3.4. मानवीय व्यक्त भाषा

मानव अपने भावों की अभिव्यक्ति के लिए जो व्यक्त वाणी का उपयोग करता है, उसे भाषा कहते हैं । भाषा विज्ञान में जिस

भाषा का ग्रहण होता है वह सांकेतिक तत्व आदि से भिन्न मानवीय व्यक्त वाणी है । भाषा शब्द संस्कृत की भाष् (भादिगणी धातु) से बना है । भाष् धातु का अर्थ है - व्यक्त वाणी । व्यक्त वाणी के रूप में जिसकी अभिव्यक्ति की जाती है, उसे भाषा कहते हैं ।

1.4. भाषा का व्यापक अर्थ

लोक जीवन में भाषा शब्द बड़े व्यापक अर्थों में प्रयुक्त होता है । सभ्य या असभ्य स्थानीय या प्रांतीय, राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय, वैयक्तिक था या जातिगत, सामाजिक और धर्मगत, स्वाभाविक और कृत्रिम, पारस्परिक और वैयक्तिक - न जाने कितने विश्लेषणात्मक प्रकार भाषा के अर्थ को प्रकट करते समय प्रयुक्त किये जा रहे हैं । भाषा विज्ञान में इसका प्रयोग संकुचित अर्थ में किया जाता है । भाषा में ध्वनि संकेत होते हैं जिनसे भाव व विचारों की अभिव्यक्ति होती है ।

1.4.1. भाषा शब्द के दो अर्थ

भाषा शब्द का प्रयोग दो अर्थों में किया जाता है -
(i) व्यापक अर्थ (ii) संकुचित अर्थ ।

(i) व्यापक अर्थ में भाषा का प्रयोग मनुष्यों की भाषा से लेकर पशु-पक्षियों की बोलियों तक किया जाता है ।

(ii) **भाषा का संकुचित अर्थ - डॉ. मिताली भट्टाचारजी का मत**

डॉ. मिताली भट्टाचारजी के अनुसार भाषा विज्ञान भाषा के संकुचित व सीमित रूप का अध्ययन करता है । निरर्थक ध्वनियों या सांकेतिक चिह्नों को भाषा वैज्ञानिक अपने अध्ययन का विषय नहीं मानते । मानव मुख से निःसृत सार्थक ध्वनियाँ ही भाषा कहलाती हैं । भाषा वही है जिसके द्वारा मानव अपने भाव, विचार और इच्छाओं का स्वेच्छा से आदान प्रदान करता है । भाषा विज्ञान में भाषा का प्रयोग संकुचित अर्थ में ही किया जाता है ।

1.5. भाषा की परिभाषा

जिन ध्वनि चिह्नों द्वारा मनुष्य परस्पर विचार विनिमय करता है, उनको समष्टि रूप से भाषा कहते हैं ।

1.5.1. भाषा शब्द की व्युत्पत्ति : पतंजलि का मत

मानव मात्र के लिये अत्यंत उपयोगी स्वाभाविक और लाभप्रद भाषा शब्द की व्युत्पत्ति, संस्कृत भाषा की भाष् या 'भास्' धातु से हुई है । अभिधार्थ है - कहना । भाषा के आधार मानसिक भी हैं और भौतिक भी ।

1.5.2. पाणिनि का मत

मानसिक आधार परक प्रक्रिया के विषय में आचार्य पाणिनि का मत है - भाषा वही है जिसके द्वारा मानव अपने भाव, विचार और इच्छाओं का स्वेच्छा से आदान प्रदान करता है ।

1.5.3. पतंजलि द्वारा प्रदत्त परिभाषा

वर्णों में व्यक्त वाणी को भाषा कहते हैं । बुद्धि से विभिन्न विषयों को जानकर आत्मा उन्हें प्रकट करने के लिये मन को आज्ञा देती है । तदुपरांत मन शारीरिक शक्ति को और शारीरिक शक्ति द्वारा वायु अर्थात् ध्वनि को प्रेरित करती है ।

1.5.4. भर्तृहरि द्वारा प्रदत्त परिभाषा

शब्द-व्यापार अर्थात् भाषा दो बुद्धियों के मध्य आदान प्रदान का माध्यम है जिसके द्वारा सामाजिक मनुष्य असंख्य भावों एवं विचारों का आदान प्रदान करता है ।

1.5.5. डॉ. हरीश शर्मा द्वारा प्रदत्त भाषा की परिभाषा

भाषा उच्चारण अवयवों से उत्पन्न विश्लेषण एवं संश्लेषण सापेक्ष ध्वनि प्रतीकों की मानवीय यादृच्छिक सार्थक परम्परागत कालातीत एवं प्रयत्न साध्य सक्रिय व्यावहारिक संरचित व व्युत्पादक व्यवस्था है ।

1.5.6. डॉ. बाबूराम सक्सेना द्वारा प्रदत्त परिभाषा

डॉ. बाबूराम सक्सेना भाषा का व्यापक अर्थ ग्रहण करते हुए उसकी इस प्रकार व्याख्या करते हैं ''भाषा वह साधन है जिसके द्वारा एक प्राणी अन्य प्राणी के प्रति अपने विचार भाव या इच्छा प्रकट करता है ।'' भाषा के इस व्यापक अर्थ में विभिन्न संकेत, ध्वनि चिह्न आदि भी आ जाते हैं ।

1.5.7. श्री दुनीचंद द्वारा प्रदत्त भाषा की परिभाषा

श्री दुनीचंद के अनुसार हम अपने मन के भाव प्रकट करने के लिए जिन सांकेतिक ध्वनियों का उच्चारण करते हैं, उन्हें भाषा कहते हैं ।

1.5.8. श्री किशोरीदास वाजपेयी द्वारा प्रदत्त परिभाषा

विभिन्न अर्थों में सांकेतिक शब्द समूह को श्री किशोरीदास बाजपेयी भाषा मानते हैं ।

1.5.9. डॉ. पी. डी. गुणे द्वारा प्रदत्त परिभाषा

डॉ. पी.डी. गुणे के शब्दों में भाषा विचारों व मनोभावों को व्यक्त करने वाले ऐसे संकेतों का कुल योग है जो देखे ओर सुने जा सकें और जो इच्छानुसार उत्पन्न किये एवं दोहराये जा सकें ।

1.5.10. श्री कामता प्रसाद गुरू द्वारा प्रदत्त परिभाषा

श्री कामता प्रसाद गुरू की परिभाषा यह है - भाषा वह साधन है, जिसके द्वारा मनुष्य अपने विचार दूसरों पर भली भाँति प्रकट कर सकता है और दूसरों के विचारों को स्पष्टतः समझ सकता है ।

1.5.11. विश्व की सर्वश्रेष्ठ संपत्ति भाषा - तारापुरेवाल का मत

भाषा वैज्ञानिक तारापुरेवाल के अनुसार ''भाषा वह साधन है जिसके बिना मनुष्य अपने को पशु से ऊँचा नहीं उठा पाता'' । भाषा विश्व की सर्वश्रेष्ठ संपत्ति है ।

VOP - 17 - 141

1.5.12. श्री नलिनीमोहन सन्याल द्वारा प्रदत्त भाषा की परिभाषा

श्री नलिनीमोहन सन्याल के शब्दों में अपने स्वर को विविध प्रकार से विन्यस्त करने से उसके जो जो आकार होते हैं, उनका संकेतों के सदृश्य व्यवहार कर अपनी चिंताओं को तथा मनोभावों को जिस साधन से हम प्रकाशित करते हैं, उस साधन को भाषा कहते हैं ।''

1.5.13. डॉ. द्वारिका प्रसाद सक्सेना द्वारा प्रदत्त परिभाषा

डॉ. द्वारिका प्रसाद सक्सेना के अनुसार भाषा मुख से उच्चरित उस परम्परागत सार्थक एवं व्यक्त ध्वनि संकेतों की समष्टि है, जिसकी सहायता से मानव आपस में विचारों एवं भावों का आदान प्रदान करते हैं तथा जिसका वे स्वेच्छानुसार अपने दैनिक जीवन में प्रयोग करते हैं ।

1.5.14. डॉ. सरयू प्रसाद अग्रवाल द्वारा प्रदत्त भाषा की परिभाषा

डॉ. सरयू प्रसाद जी के शबदों में भाषा वाणी द्वारा व्यक्त स्वच्छंद प्रतीकों की वह रीतिबद्ध पद्धति है जिससे मानव अपने भावों का परस्पर आदान-प्रदान करते हुए एक दूसरे को सहयोग देते हैं ।

1.5.15. श्री मंगलदेव शास्त्री द्वारा प्रदत्त भाषा की परिभाषा

श्री मंगलदेव शास्त्री के अनुसार भाषा मनुष्यों की वह चेष्टा या व्यापार है जिससे मनुष्य अपने उच्चारणोपयोगी शारीरिक अवयवों से उच्चारण किये गये वर्णनात्मक या व्यक्त शब्दों द्वारा अपने विचारों को प्रकट करते हैं ।

1.5.16. डॉ. श्याम सुंदर दास की भाषा की परिभाषा

डॉ. श्याम सुंदर दास भाषा को यों परिभाषित करते हैं - मनुष्य और मनुष्य के बीच वस्तुओं के विषय में अपनी इच्छा व मति

का आदान प्रदान करने के लिए व्यक्त ध्वनियों के संकेतों का जो व्यवहार होता है, उसे भाषा कहते हैं ।

1.5.17. श्री बालकृष्ण भारद्वाज द्वारा प्रदत्त भाषा की परिभाषा

श्री बालकृष्ण भारद्वाज की परिभाषा यह है - भाषा मनुष्य की रचनात्मक पद्धति पर आधारित यादृच्छक वाक्य प्रतीकों का वह एकल व्याकरण है, जिसके द्वारा मानव समुदाय विचार विमर्श करता है ।

1.5.18. डॉ. भोलानाथ तिवारी द्वारा प्रदत्त भाषा की परिभाषा

महान भाषा विज्ञान शास्त्री डॉ. भोलानाथ तिवारीजी के शब्दों में ''भाषा उच्चारण अवयवों से उच्चरित यादृच्छिक ध्वनि प्रतीकों की वह व्यवस्था है, जिसके द्वारा एक समाज के लोग आपस में भावों और विचारों का आदान प्रदान करते हैं । भाषा एक निश्चित प्रयत्न के फलस्वरूप मनुष्य से निःसृत वह सार्थक ध्वनि समष्टि है, जिसका विश्लेषण व अध्ययन हो सके ।

1.5.19. 'भाषा विज्ञान की भूमिका' ग्रंथ में प्रदत्त परिभाषा

'भाषा विज्ञान की भूमिका' ग्रंथ में भाषा को यों परिभाषित किया गया है - उच्चरित ध्वनि-संकेतों की सहायता से भाव या विचार की पूर्ण अभिव्यक्ति भाषा है, जिसकी सहायता से मनुष्य परस्पर विचार विनिमय या सहयोग करते हैं । उस यादृच्छिक रूढ़ संकेतों की प्रणाली को भाषा कहते हैं ।

1.5.20. 'भाषा विज्ञान और हिन्दी भाषा' ग्रंथ में प्रदत्त भाषा की परिभाषा

'भाषा विज्ञान और हिन्दी भाषा' ग्रंथ के अनुसार भाषा भाव या विचारों की अभिव्यक्ति के लिए मानव द्वारा प्रयुक्त वह वाचिक साधन है, जो कल्पित प्रतीक ध्वनियों से व्यवस्थित सार्थक रूढ़ और कालातीत होकर प्रयुक्त किया जाता है ।

1.5.21. प्लॉटो की परिभाषा

प्लॉटो के अनुसार भाषा मूलतः प्रकृति पर आधारित थी । बाद में परम्परागत मान्यता द्वारा उसका रूप परिवर्तन हो गया । विचार आत्मा की मूक या अध्वन्यात्मक बातचीत है । पर वही जब ध्वन्यात्मक होकर होठों पर प्रकट होती है तो उसे भाषा की संज्ञा देते हैं ।

1.5.22. प्लान व ट्रेचर की परिभाषा

प्लान व ट्रेचर के अनुसार भाषा वह ध्वन्यात्मक संकेतों का समूह है जिसके माध्यम से समाज के सदस्यों को सहयोग का वरदान प्राप्त होता है ।

1.5.23. एन्साइक्लोपिडिया में प्रदत्त परिभाषा

एन्साइक्लोपिडिया के अनुसार भाषा वह ध्वन्यात्मक संकेतों का समूह है जिसकी सहायता से समाज के सदस्य आपस में अपने विचार एवं भाव व्यक्त करते हैं एवं व्यवहार चलाते हैं ।

1.5.24. जेस्पर्सन द्वारा प्रदत्त परिभाषा

जेस्पर्सन के विचार में भाषा का सार मानवीय गतिविधि है । वह मानवीय कार्यों को समझाने में सहायता करती है । चिह्न उन सब प्रकार के प्रतीकों से गृहीत हैं, जो मनुष्यों में संभाषण को संभव बनाते हैं 1

1.5.25. डॉ. जो.वांद्रियैज द्वारा प्रदत्त परिभाषा

डॉ. जो. वांद्रियैज भाषा के इतिहास की भाषा वैज्ञानिक भूमिका में लिखते हैं कि भाषा चिह्नों का एक वृत्त चक्र है ।

1.5.26. बी.ब्लोच एवं जी एल ड्राइगर

बी.ब्लोच एवं जी एल ड्राइगर द्वारा प्रदत्त परिभाषा कुछ

इस प्रकार है - भाषा यादृच्छिक ध्वनि संकेतों की वह पद्धति है जिसके द्वारा मानव परस्पर विचारों का आदान प्रदान करता है ।

इस भाषा के चार ज्ञातव्य तत्व हैं -

1. भाषा एक पद्धति है ।
2. भाषा संकेतात्मक है ।
3. भाषा वाचिक ध्वनि संकेत है ।
4. भाषा द्वारा मानव परस्पर विचारों का आदान-प्रदान करता है ।

1.5.27. क्रोसे की परिभाषा

क्रोसे के अनुसार Language is articulate limited organised sound employed in expression,

अंग्रेजी में उपलब्ध परिभाषाएँ उसी भाषा में दी जा रही है ।

1.5.28. हेनरी स्वीट द्वारा प्रदत्त परिभाषा

हेनरी स्वीट की भाषा की परिभाषा यह हैं - Expression of thought by means of speech sounds.

1.5.29. एम. ए. पाई एवं फ्राँक गेयर द्वारा प्रदत्त परिभाषा

The language is a system of communication by sound through the organs of speech and hearing among human beings of a certain group or community using vocal symbols possessing arbitrary conventional meanings.

1.5.30. स्टुटवट ट्राप प्रदत्त परिभाषा

Language is a system of arbitrary vocal symbols by means of which members of a social group co-operate and interact.

1.5.31. एडवर्ड शपिर द्वारा प्रदत्त परिभाषा

Language is purely human and non instinctive method of comunicating ideas, emotions and desires by means of system of voluntarily produced symbols.

1.5.32. एड़विन घौस द्वारा प्रदत्त परिभाषा

Language is a system of conventional signs that can be voluntarily produced at any time.

1.5.33. मैक्समूलर द्वारा प्रदत्त भाषा की परिभाषा

महान भाषा शास्त्री मैक्समूलर के शब्दों में - भाषा मानव की चतुर बुद्धि द्वारा आविष्कृत एक ऐसा उपाय है जिसकी सहायता से हम अपने विचार सरलता और तत्परता से दूसरों पर प्रकट कर सकते हैं ।

1.5.34. डॉ. ज्ञानराज काशीनाथ गायकवाड़ की परिभाषा

डॉ. ज्ञानराज काशीनाथ के अनुसार भाषा विज्ञान के वस्तुनिष्ठ वैज्ञानिक दृष्टिकोण के अनुकूल भाषा की परिभाषा इस प्रकार दी जाती है -

भाषा मनुष्य के ध्वनि यन्त्र से संबंधित उच्चारण अवयवों से उच्चरित, यादृच्छिक ध्वनि-प्रतीकों के समूह की वह व्यवस्था है, जिसके माध्यम से एक भाषा समाज के लोग आपस में भावों और विचारों का आदान प्रदान करते हैं ।

1.6. भाषा की प्रकृति एवं विशेषताँए

भाषा के स्वरूप, प्रकृति एवं विशेषताओं को दो वर्गों में रख सकते हैं -

1. रचनागत तथा
2. स्वभावगत ।

भाषा एक पद्धति है

प्रत्येक शैली की प्रकृति एवं विशेष व्यवस्था होती है । उसके विभिन्न अंग एवं तत्व ध्वनि, शब्द, पद, वाक्य आदि के निश्चित नियम होते हैं । यद्यपि भाषा के रूप में निरंतर परिवर्तन याने विकास होता रहता है, तथापि उसकी एक निश्चित व्यवस्था होती है । व्यवस्थित रखने के नियम ही व्याकरण कहलाते हैं ।

1.6.1. भाषा की प्रकृति : डॉ. मितालीजी का मत

डॉ. मिताली भट्टाचारजी के शब्दों में 'मानव सृष्टि के क्रम की तरह भाषा का प्रवाह भी अविच्छिन्न रूप में मानव के साथ साथ चल रहा है । जिस प्रकार नदी की धारा सदा प्रवहमान रहती है, उसी प्रकार भाषा भी प्रवाहित होती है । नित्य नूतन प्रवहिष्णुता भाषा की प्रकृति का प्रधान तत्व है । डॉ. मिताली इस प्रवहिष्णुता को भाषा का प्राण तत्व मानती हैं ।

1.6.2. भाषा की प्रकृति में समुद्रगुण है

ऐतिरेय ब्राह्मण व ऋग्वेद के अनुसार भाषा की प्रकृति में समुद्र का गुण है । भाषा समुद्र है । समुद्र की तरह भाषा भी कभी क्षीण होती नहीं है । भाषा समुद्रवत् अनंत और अथाह है । तांडव महाब्राह्मण में भी भाषा को समुद्र कहा गया है ।

1.6.3. भाषा स्थूलता से सूक्ष्मता की ओर जाती है

भाषा प्रारंभ में स्थूल होती है । धीरे धीरे सूक्ष्म मनोभावों और विचारों को व्यक्त करने के लिये उसकी अभिव्यक्ति क्षमता भी सूक्ष्म होती जाती है । मानव-मस्तिष्क से सीधे जुड़ी होने के कारण उसके विकास का प्रभाव भाषा पर पड़ता है । पहले वस्तुओं का ज्ञान उनके स्थूल रूप में ग्रहण करता है । बाद में धीरे धीरे अन्य सूक्ष्म भावों का परिचय प्राप्त करता है । इसी प्रकार भाषा का विकास स्थूल से सूक्ष्म की ओर होता है ।

1.6.4. भाषा अप्रौढ़ता से प्रौढ़ता की दिशा में जाती है

भाषा की दूसरी प्रवृत्ति यह भी है कि वह प्रारंभ में गढ़-अनगढ़ या अप्रौढ़ होती है । उसमें व्याकरण सम्बंधी अनियमितताएँ, ग्राम्य प्रयोग, अपवाद आदि देखने में आते हैं । बाद में भाषा प्रयोग और प्रतिष्ठा के कारण संस्कृत होकर व्यवस्थित तथा प्रौढ़ रूप धारण कर लेती है ।

1.6.5. भाषा की धारा कठिनता से सरलता की ओर जाती है

भाषा की विशेष उल्लेखनीय विशेषता यह है कि यह सदैव कठिनता से सरलता की ओर प्रवाहित होती रहती है । जिन शब्दों के उच्चारण में व्यक्ति को अधिक प्रयास करना पड़ता है, वह उनको सरल ढंग से उच्चरित करने लगता है । इसी प्रकार व्याकरण बड़े-बड़े शब्दों, समासों आदि के लिए छोटे शब्दों का प्रयोग करता है । सरलीकरण की इस प्रक्रिया को व्याकरण, साहित्य आदि के बंधन भी नहीं बाँध पाते । प्रयत्न लाघव, मुख-सुविधा, शारीरिक कारणों आदि के द्वारा कर्म काम, धर्म धरम और पश्चिम पच्छिम हो गये हैं ।

1.6.6. भाषा संयोगावस्था से वियोगावस्था की ओर जाती है

भाषा की एक विशेष उल्लेखनीय प्रवृत्ति यह है कि वह निरंतर गति से संयोगावस्था से वियोगावस्था की ओर अग्रसर होती है । यह भाषा की सरलीकरण प्रवृत्ति का ही परिणाम है । संश्लिष्टावस्था तथा संयोगावस्था में अर्थतत्व प्रकृति या मूल शब्द, सार्थ प्रत्यय आदि परस्पर एक दूसरे से इस प्रकार सम्मिलित रहते हैं कि दोनों को पृथक् रूप में समझना कठिन होता है ।

1.6.7. भाषा एक अर्जित वस्तु है

भाषा मानव के अन्य अंग प्रत्यंग, यथा -- हाथ, पैर, कान, नाक, मुँह आदि की तरह जन्मजात नहीं होती । मानव इसे

समाज में रहकर अर्जित करता है । बालक को चलना, खाना, उठाना आदि की भाँति बोलना भी सीखना पड़ता है ।

1.6.8. विविधता अथवा अनेकता के साथ एकता और स्थिरता

भाषा के रूप में निरंतर परिवर्तन होता रहता है । उसको बाँधकर रखने के व्याकरण आदि अनेक प्रयास किये जाते हैं । किंतु वह इन नियमों को तोड़कर निरंतर आगे बढ़ती रहती है । इस परिवर्तनशीलता के साथ-साथ भाषा में स्थिरता व एकरूपता भी दृष्टिगत होती है । भाषा में दो परस्पर विरोधी प्रवृत्तियाँ निरंतर देखने में आती हैं - एक ओर उसमें विविधता व परिवर्तनशीलता दिखलाई पड़ती है तो दूसरी ओर उसमें एकता और स्थिरता भी देखने में आती है । भाषा, व्याकरण, साहित्य आदि उपायों द्वारा भाषा की परिवर्तनशील प्रवत्ति पर अंकुश लगाया जाता है ।

1.6.9. डॉ. कपिलदेव द्विवेदी का मत

डॉ. कपिलदेव द्विवेदी का मत है कि भाषा का कोई स्थायी रूप नहीं होता । भाषा भी मानव-जीवन का भौतिक जीवित तत्व है । मानव एक जीवन के बाद पुनर्जन्म प्राप्त कर नया रूप ले लेता है । संस्कृत से हिन्दी तक आने में संस्कृत ने कितने चोले बदले हैं ! शैली में स्थिरता या स्थायित्व उसके विनाश का चिह्न है । भाषा में नित्य परिवर्तन और नित्य नूतनता इसके विकास और गतिशीलता के चिह्न हैं ।

1.6.10. भाषा का कोई अंतिम रूप नहीं होता

भाषा का कोई अंतिम रूप नहीं होता । आज जिस रूप में कोई भाषा प्रयुक्त होती है, वह उसी रूप में भविष्य में यथावत् नहीं रहती । मृत भाषा का अंतिम रूप होता है । परंतु जीवित भाषा में यह बात नहीं है । परिवर्तन व अस्थैर्य ही भाषा के जीवन का द्योतक है । स्थिरता मृत्यु है या मृत्यु ही पूर्णतः स्थिरता है ।

1.6.11. भाषा की भौगोलिक सीमा होती है

'चार कोस पर पानी बदले, आठ कोस पर बानी ।' स्थान भेद से भाषा भेद होता जाता है । बंगला, मराठी, गुजराती, पंजाबी आदि हिन्दी से अलग हैं । सबकी अपनी अपनी भौगोलिक सीमा है । उस सीमा से बाहर जाने पर भाषा भेद, अर्थ-भेद आदि प्राप्त होते हैं । इसी प्रकार अंग्रेज़ी, रूसी, चीनी आदि की भी भौगोलिक मिश्रित सीमाँए हैं ।

1.6.12. भाषा की ऐतिहासिक सीमा भी होती है

जिस प्रकार प्रत्येक भाषा की भौगोलिक सीमा है, इसी प्रकार उसकी ऐतिहासिक सीमा होती है । ऐतिहासिक भाषा विज्ञान में प्रत्येक भाषा के ऐतिहासिक पक्ष का अध्ययन किया जाता है ।

1.6.13. भाषा गतिशील होती है : ऋग्वेद

नदी की गतिशीलता नदी के जल को पवित्र एवं शुद्ध रखती है । इसी प्रकार भाषा की गतिशीलता भी भाषा को पवित्र रखती है । ऋग्वेद का कथन है कि हृदय के द्वारा भाषा को सरस और बुद्धि के द्वारा उसको परिष्कृत रखा जाता है ।

1.6.14. भाषा सहज एवं स्वाभाविक क्रिया है

प्रारंभ में मनुष्य को भाषा प्रयत्नपूर्वक सीखनी पड़ती है । किंतु एक बार भाषा के सीख लेने पर उसके प्रयोग में मनुष्य को कोई विशेष प्रयास नहीं करना पड़ता । वह उसका अनायास ही सहज प्रयोग करता है ।

1.6.15. निरंतर रूप से परिवर्तनशील है

परिवर्तनशीलता या विकास भाषा की एक महत्वपूर्ण प्रवृत्ति है । व्याकरण आदि नियमों द्वारा भाषा को स्थिर, व्यवस्थित और क्रमबद्ध रखने के अनेक प्रयासों के बाद भी भाषा निरंतर रूपेण

अनेक रूपों में बदलती रहती है । भाषावैज्ञानिक भाषा के इस परिवर्तन को उसका स्वाभाविक विकास मानता है ।

1.6.16. भाषा की परिवर्तनशीलता के संबंध में डॉ.मितालीजी के विचार

डॉ. मितालीजी के शब्दों के अनुसार भाषा भाषिक अनुकरण से सीखी जाती है । मौखिक प्रतिभा में अनुकरण का प्रश्रय लिया जाता है । शिशु अपूर्ण व शुद्ध उच्चारण करता है । यह अनुकरण की अपूर्णता भाषा में परिवर्तन लाती है । सुनने समझने में व बोलने में संभाव्य त्रुटियाँ इस प्रकार भाषा में परिवर्तन लाती हैं ।

1.6.17. भाषा का मौखिक रूप पहले परिवर्तित होता है

भाषा के रूप के मुख्य भेद हैं - मौखिक तथा लिखित । परिवर्तन का नियम पहले भाषा के मौखिक रूप को प्रभावित करता है, लिखित को बाद में । अनुकरण की अपूर्णता, शारीरिक कारणों तथा सामाजिक, आर्थिक व राजनैतिक परिस्थितियों के कारण भाषा का मौखिक रूप अधिक परिवर्तित होता है ।

1.6.18. उच्चरित भाषा में संभाव्य परिवर्तन के संबंध में डॉ.कपिल देव के विचार

महान भाषा विज्ञानवेत्ता डॉ.कपिल देव द्विवेदी कहते हैं कि यद्यपि अनुकरण के साथ ही परिवर्तन की प्रक्रिया प्रारंभ हो जाती है, तथापि परिवर्तन का प्रथम प्रभाव भाषा के उच्चरित रूप पर पड़ता है। व्यक्तिगत उच्चारण में अंतर होते होते वह समाज के उच्चरित रूप में भी परिलक्षित होने लगता है ।

1.6.19. उच्चरित रूप में परिवर्तन

उच्चरित रूप में परिलक्षित परिवर्तन के उदाहरण दिये जा रहे हैं -

> अग्नि > आग, चतुर्वेदी > चौबे, द्विवेदी > दुबे, उपाध्याय

> ओझा > झा, सत्य > सच, घृत > घी, शर्करा > शक्कर - ये उच्चरित रूप धीरे धीरे साहित्य में प्रवेश पाकर परिष्कृत या विकसित रूप मान लिये जाते हैं ।

1.6.20. डॉ. कपिलदेव एवं डॉ. मिताली भट्टाचारजी

डॉ. कपिलदेव द्विवेदी एवं डॉ. मिताली भट्टाचारजी के अनुसार भाषा मनुष्य को जन्म के साथ नहीं मिलती है, अर्थात् भाषा जन्मसिद्ध संपत्ति नहीं है । भाषा पैतृक परम्परा के रूप में नहीं मिलती । भाषा रूपी संपत्ति का अर्जन करना पड़ता है । यह अर्जित की जाती है । मानव के जन्म के समय समाज में भाषा की स्थिति है ।

1.6.21. प्रत्येक भाषा की संरचना पृथक् होती है

विश्व की प्रत्येक भाषा की संरचना अलग होती है । शब्दावली, व्याकरण, उच्चारण, शब्दरूप, धातुरूप, वाक्य प्रयोग आदि में आकाश-पाताल का अंतर है । प्रत्येक भाषा एक स्वतंत्र इकाई है । संस्कृत में तीन वचन हैं, पालि-प्राकृत, अपभ्रंश और हिन्दी में केवल एक वचन और बहुवचन ही हैं । संस्कृत में तीन लिंग हैं - पर हिन्दी में दो ही लिंग हैं - पुल्लिंग व स्त्रीलिंग । इसी प्रकार सभी भाषाओं के अपने स्वतंत्र नियम हैं । उनके अनुसार ही भाषा संचलित होती है ।

1.6.22. भाषा सर्वतंत्र स्वतंत्र होती है

साहित्यिक भाषा के नाम पर जब भाषा में गतिरोध उत्पन्न किया जाता है, तब भाषा अपना विरोधी रूप प्रकट करती है । सभी बंधनों को तोड़ती हुई जन भाषा के रूप में अग्रसर होती है । भाषा को साहित्यिक भाषा के स्तरीय रूप के नाम पर बद्ध करना स्वच्छंदचारी सिंह को किसी किसी कटघरे में बंद करने के समान है । इस बंधन के कारण भाषा के दो स्वरूप हो जाते हैं -

1. साहित्यिक 2. लोक प्रयुक्त - ।

नये शब्दों का आदान प्रदान अव्याहत गति से चलता है । डॉ. कपिलदेव द्विवेदी के शब्दों में -- जहाँ जीवन है वहाँ परिवर्तन है, जहाँ परिवर्तन है वहाँ विकास है, जहाँ विकास है वहाँ नित्य नूतनता है । इसलिये भाषा के अंतिम स्वरूप की कल्पना तक न की जी सकती है ।

1.6.23. भाषा स्थिरीकरण से प्रभावित होती है -- श्री होनूरजी राव शंभूकारी

श्री होनूरजी राव शंभूकारी जी के अनुसार भाषा में दो प्रवृत्तियाँ कार्य करती हैं -

1. स्थिरीकरण 2. अस्थिरीकरण ।

भाषा में दो विरोधी शक्तियाँ सदा काम करती हैं

1. केन्द्राभिगामी 2. केन्द्रापगामी ।

केन्द्राभिगामी शक्तियाँ अस्थिरता, परिवर्तन एवं ह्रास को रोकती हैं ओर केन्द्र को पुष्ट करती हैं अतः भाषा के परिवर्तन की गति रोकी जाती है ।

1.6.23.1. डॉ. कपिलदेव के अनुसार भाषा की विरोधी शक्तियों का परिणाम

यह स्थिरीकरण या मानकीकरण की प्रक्रिया है । भाषा अपने परिष्कृत रूप को इससे सुरक्षित रख पाती है और विनाश या ह्रास से अपना बचाव करती है । विकेन्द्रीयकरण की प्रक्रिया भाषा के परिवर्तन के साथ ही अस्थिरता लाती है । इसके द्वारा भाषा अपने स्वाभाविक रूप में परिवर्तित होती रहती है । स्थिरीकरण या मानकीयकरण से भाषा परिष्कृत एवं स्थिर होती है तथा अस्थिरीकरण की प्रक्रिया से भाषा में परिवर्तन और अस्थायिता आती है ।

1.6.24. भाषा का मूल रूप वाक्य है, पद केवल व्यावहारिक है

भाषा का मूल वाक्य है । वाक्य ही वह सत्ता है, जो मानव के विचार को पूर्ण एवं स्पष्ट रूप में प्रस्तुत करती है । वाक्यों का आधार विचार है और विचारों का आधार मूर्त रूप वाक्य है । विचार पदों द्वारा नहीं, अपितु वाक्यरूप में अभिव्यक्त होता है ।

1.6.25. भाषा परम्परागत गुण है

भाषा सामाजिक सम्पत्ति होने के नाते व्यवहार द्वारा सीखी जाती है । एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक भाषा का निरंतर संक्रमण होता रहता है । बालक अपने से बड़ों से भाषा का प्रयोग सुनकर सीखता है। अच्छी परम्परा में पले बालकों की भाषा अन्य बालकों की अपेक्षा कहीं अधिक समृद्ध होती है । संस्कृत भाषा-भाषी परिवारों के बालकों को अनायास ही तत्सम शब्दावली का ज्ञान होता है । भाषा वंशानुक्रम से संक्रमित नहीं होती है, तथापि बालक के शब्द ज्ञान में वंश परंपरा का विशेष हाथ रहता है ।

1.6.26. अनुकरण की प्रधानता

भाषा के सीखने में मनुष्य की अनुकरण पद्धति का विशेष योग होता है । बालक अनकरण की अपनी सहज प्रवृत्ति से ही भाषा का अर्जन करता है ।

1.6.27. भाषा अनुकरण व व्यवहार से अर्जित की जाती है

शिशु समाज से भाषा सीखता है । बचपन में वह माता पिता, भाई, बहन आदि से उच्चरित शब्दों का अनुकरण करता है । असंख्य बार अशुद्ध उच्चारण करता है । शनैः शनैः शुद्ध वाक्य कहने में समर्थ हो जाता है ।

1.6.28. पाणिनी और पतंजलि का मत

व्यवहार एवं शिक्षण से अर्जन की क्रिया चलती है । आचार्य

पाणिनि एवं पतंजलि लोक व्यवहार को ही भाषा ज्ञान का प्रमुख साधन मानते हैं ।

1.6.29. भाषार्जन के संबंध में आचार्य जगदीश के विचार

आचार्य जगदीश ''शब्द शक्ति प्रकाशिका'' में शब्दार्थ ज्ञान के 8 साधनों का उल्लेख करते हैं -

1. व्याकरण
2. उपमान
3. कोष ग्रंथ
4. आप्त वाक्य
5. लोक व्यवहार
6. वाक्य शेष प्रकरण
7. विवरण
8. ज्ञानपद के साहचर्य ।

1.6.30. भाषा नित्य नूतन है व चिर पुरातन है

भाषा में निरंतर संशोधन और परिष्करण की प्रक्रिया चलती रहती है, अतएव भाषा चिरपुरातन होने पर भी नवीन, कालातीत होने पर भी अद्यतनीन बनी रहती है । भाषा उषा की तरह अपने में सुदृढ़ और उपादेय शब्दों को चलाती है तथा जो शब्द जीर्ण-शीर्ण, अरुचिकर या अप्रचलित हो गये हैं, उन्हें विदा किया जाता है और उनके स्थान पर नए रंगरूट सम्मिलित किये जाते हैं ।

1.6.31. प्रतीकात्मक या सांकेतिक ध्वनियों का प्रयोग

भाषा में प्रयुक्त होने वाली ध्वनियाँ प्रायः प्रतीकात्मक होती हैं । वे एक धारणा या विचार की प्रतीक होती हैं । उनके द्वारा जिस अर्थ की प्रतीति होती है, उसके पीछे सामाजिक मान्यता मुख्य होती है । उदाहरणार्थ एक ही वस्तु, पदार्थ, प्राणी आदि के लिए विभिन्न भाषाओं में अलग अलग शब्दों का प्रयोग इसी तथ्य की

पुष्टि करता है, जैसे हिन्दी का 'कुत्ता', संस्कृत में 'श्वान', अंग्रेज़ी में 'डॉग', रूसी में 'सबाका' कहा जाता है ।

1.6.32. भाषा के स्वरूप के संबंध में डॉ. कपिलदेव के विचार

भाषा की प्रवृत्तियों को जानने के लिए उसके स्वरूप के बारे में जानना अनिवार्य व उपयुक्त है । भाषा की कुछ विशेषताएँ व प्रवृत्तियाँ हैं जो सामान्य रूप से विश्व की सभी भाषाओं में प्राप्त होती हैं । भाषा के स्वरूप का विवेचन व विश्लेषण भाषा विज्ञान का प्रमुख उद्देश्य है ।

1.6.33. स्वेच्छागत यादृच्छिक वाग्ध्वनियों की समृद्धि

भाषा के रूप में वक्ता अपने भाव और विचार को प्रकट करने के लिये विविध ध्वनियों का उच्चारण करता है । इन ध्वनियों पर उसके मस्तिष्क का नियंत्रण होता है । वह जिस भाव और विचार को अभिव्यक्त करना चाहता है, उसी के अनुरूप ध्वनियों का उच्चरित करता है । यद्यपि भावावेश की स्थिति में मनुष्य के मुख से कुछ ध्वनियाँ अनायास ही निकल पड़ती हैं तथापि बोलनेवाले की इच्छा के अनुसार ध्वनियाँ निकलती हैं ।

1.6.34. डॉ. ज्ञानराज काशीनाथ गायकवाड़ के विचार

डॉ. ज्ञानराज काशीनाथ गायकवाड़ कहते हैं कि भाषा ध्वनिमयी होती है । भाषा विज्ञान अपने वैज्ञानिक दृष्टिकोण के आधार पर और वस्तुनिष्ठ प्रमाणों के आधार पर उस भाषा का अध्ययन और विश्लेषण करता है, जो मनुष्य के ध्वनि-यंत्र से सम्बन्धित उच्चारण अवयवों से उच्चरित ध्वनियों के रूप में अस्तित्व में आ जाती हैं । इसका अर्थ यह है कि भाषा विशिष्ट ध्वनियों के मूलभूत आधार पर 'ध्वनिमयी' बनी रहती है और सभी प्रकार की अन्य ध्वनियों से अर्थात् अन्य आवाज़ों से मुक्त रहती है, चाहे वह मनुष्य की अन्य प्रकार की आवाज़ हो, चाहे वाद्य की आवाज़ हो, चाहे यन्त्र की आवाज़ हो, चाहे अन्य किसी भी प्रकार की आवज़ हो । भाषा विज्ञान की मान्यता के अनुसार वही भाषा है, जो मनुष्य

के ध्वनि यन्त्र से सम्बन्धित उच्चारण अवयवों से उच्चरित ध्वनियों के मूलभूत आधार पर 'ध्वनिमथी' बनी रहती है । इस कारण से ही भाषा विज्ञान अपने वैज्ञानिक दृष्टिकोण के आधार पर 'ध्वनिमयी भाषा' का अध्ययन और विश्लेषण करने में सफल हो जाता है ।

1.6.35. भाषा का ध्वनिमय रूप ध्वनि प्रतीकों पर आधारित होता है

डॉ. गायकवाड़ कहते हैं कि मनुष्य के ध्वनियंत्र से संबंधित उच्चारण अवयवों से उच्चरित ध्वनियाँ ध्वनि प्रतीकों के रूप में प्रकट हो जाती हैं । इस कारण से ही हिन्दी भाषा की ध्वनियाँ ध्वनि प्रतीकों के रूप में ही प्रचलित हुई हैं । इससे ज्ञात होता है कि मनुष्य जैसे-जैसे अपने ध्वनि-यंन्त्र से संबंधित उच्चारण अवयवों से नयी-नयी ध्वनियों का उच्चारण करने लगा होगा, वैसे-वैसे उसने उन सभी ध्वनियों को ध्वनि प्रतीकों के रूप में स्वीकार किया होगा । इसलिए ही हिन्दी भाषा की सभी ध्वनियों को ध्वनि प्रतीकों के रूप में ही स्वीकार किया गया है ।

भाषा विज्ञान अपने ध्वनि-विज्ञान के माध्यम से मनुष्य के ध्वनि-यन्त्र से संबंधित स्वर-यंत्र, स्वर-तंत्र, काकल, अभिकाकल, कंठ, अलिजिह्व, कोमल तालु, मूर्धा, कठोर तालु, वर्त्स, जिह्वा तथा उसके विविध भाग, दाँत और ओठ-इन उच्चारण अवयवों का अध्ययन और विश्लेषण प्रस्तुत करता है और यह भी स्पष्ट करता है कि प्रश्वास रूपी हवा के सहयोग से मुख-विवर में ये उच्चारण-अवयव भाषा की उन ध्वनियों को उत्पन्न करते हैं, जिन्हें ध्वनि प्रतीकों के रूप में स्वीकार किया जाता है । इसके परिणामस्वरूप ही हिन्दी भाषा की 'अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ए, ऐ, ओ, औ, - इन स्वर ध्वनियों को तथा 'क्, ख्, ग्, घ्, ङ्, च्, छ्, ज्, झ्, ञ्, ट्, ठ्, ड्, ढ्, ण्, त्, थ्, द्, ध्, न्, प्, फ्, ब्, भ्, म्, य्, र्, ल्, व्, श्, स्, ष्, ह्,' इन व्यंजन ध्वनियों को अलग-अलग और स्वतन्त्र 'ध्वनि-प्रतीक' के रूप में स्वीकार किया गया है । इसका अर्थ यह है कि भाषा का ध्वनिमय रूप ध्वनि प्रतीकों पर ही

आधारित होता है और प्रत्येक ध्वनि प्रतीक दूसरे ध्वनि प्रतीक से अलग और स्वतंत्र होता है ।

1.6.36. भाषा के ध्वनिप्रतीक यादृच्छिक होते हैं - डॉ.गायकवाड़ के विचार

भाषा का प्रयोग जिस एक भाषा समाज में होता है वही अपनी व्यापक सामूहिक इच्छा के अनुसार अपनी भाषा की ध्वनियों को अलग तथा स्वतन्त्र ध्वनि प्रतीकों के रूप में मान्यता देता है और अपने भाषा व्यवहार में उन ध्वनि प्रतीकों का प्रयोग करता है - जिससे वे ध्वनि प्रतीक ही रूढ़ तथा प्रचलित हो जाते हैं । परिणामस्वरूप प्रायः प्रत्येक भाषा समाज के भाषा व्यवहार में उसकी अपनी अपनी इच्छा तथा मान्यता के अनुसार उसकी भाषा की ध्वनियों का प्रयोग अलग अलग ध्वनि प्रतीकों के रूप में होता है । इसलिए प्रत्येक भाषा के ध्वनि प्रतीक अलग और स्वतन्त्र होते हैं । हिन्दी भाषा के जो ध्वनि प्रतीक हैं उनसे भिन्न अंग्रेजी भाषा के ध्वनि प्रतीक हैं, जो 'ए' से लेकर 'जेड' तक हैं । इसका अर्थ यह है कि भाषा के ध्वनि प्रतीक यादृच्छिक होते हैं ।

1.6.37. भाषा का अपना एक मानक रूप भी बना रहता है

डॉ. ज्ञानराज काशीनाथ गायकवाड़ भाषा के मानक रूप के संबंध में लिखते हैं कि अपने व्याकरण के आधार पर भाषा परिनिष्ठित भाषा बनी रहती है । इसी 'परिनिष्ठित भाषा' को ही शुद्ध भाषा के रूप में और उस भाषा शैली को 'आदर्श भाषा' मानते रहते हैं, इसलिए उसे 'मानक भाषा' भी कहते हैं । इसी 'आदर्श भाषा' या 'मानक भाषा' को अंग्रेजी में Standard Language कहते हैं । 'यह मानक भाषा' ही प्रशासनिक व्यवहार, शिक्षण, साहित्य, समाचार पत्र, आकाशवाणी, दूरदर्शन, विधि आदि क्षेत्रों में 'शुद्ध भाषा' तथा ' आदर्श भाषा' के रूप में प्रयोग में लायी जाती है । यह 'मानक भाषा' व्याकरण के नियमों के आधार पर 'परिनिष्ठित भाषा बनी रहती है । इस कारण से' उसमें बहुत कम परिवर्तन होता है ।

1.6.38. एक ही भाषा व्यवहार में विविध रूपों में प्रचलित रहती है - डॉ. ज्ञानराज के विचार

समाज में एक ही भाषा अपने विविध रूपों में प्रचलित रहती है । वह भाषा बोलने के लिए 'मौखिक भाषा' होती है तो लिखने के लिए 'लिखित भाषा' होती है । एक भाषा-समाज विशिष्ट प्रदेश में रहता है । उस विशिष्ट प्रदेश में कुछ भौगोलिक कारणों से एक ही भाषा बोलियों तथा उपभषाओं के रूप में बोली जाती है । इस कारण से कहा जाता हैं ''चार कोस पर बदले पानी आठ कोस पर बानी ।''

भाषा का ही 'परिनिष्ठित रूप' राज्य शासन की 'राज्य भाषा' बनता है, केन्द्र शासन की राजभाषा बनता है और राष्ट्र की 'राष्ट्र भाषा' भी बन जाता है । इस कारण से ही हिन्दी भाषा 'परिनिष्ठत भाषा' है, 'राज्य-भाषा है', 'राज-भाषा' है और कुछ हद तक 'राष्ट्र-भाषा' भी है ।

एक ही भाषा साहित्य के क्षेत्र में 'साहित्यिक भाषा' या 'काव्य भाषा' बनती है । कानून के क्षेत्र में 'कानूनी भाषा' बनती है, व्यापार के क्षेत्र में 'व्यापार भाषा' बनती है और 'विज्ञान' के क्षेत्र में 'विज्ञान-भाषा' बनती है । इस प्रकार व्यवहार में एक ही भाषा भिन्न-भिन्न रूपों में प्रचलित रहती है और अलग-अलग क्षेत्रों में अलग-अलग रूपों में उपयोगी बनी रहती है ।

1.7. मानव-जीवन में भाषा का स्थान

मानव जीवन भर भाषा को प्रयुक्त करता है । नाना ज्ञान-विज्ञान की प्राप्ति और प्रगति भाषा के माध्यम से करता है । भाषा के द्वारा लोक यात्रा सहज बन जाती है । यदि संसार में शब्द रूपी अग्नि का प्रकाश न होता तो लोक तमस्तोममय बन जाता ।

1.7.1. सामाजिक सम्पत्ति

भाषा विश्व के समस्त प्राणियों में केवल मनुष्य का ही गुण तथा निधि है । इस विशिष्ट मानवी गुण की उत्पत्ति एवं विकास मानव-समाज में होता है । भाषा व्यक्ति को समाज की ही देन है । जो व्यक्ति जितना अधिक सामाजिक होता है, उसकी भाषा उतनी ही अधिक विकसित और समृद्ध होती है । समाज के विकास के साथ-साथ भाषा का भी विकास होता है ।

1.7.2. भाषा मानवता की पूँजी है - डॉ.कपिलदेव

डॉ.कपिलदेव द्विवेदी के शब्दों में भाषा मानव मात्र का अक्षय कोष है । वही मानवता की पूँजी व मानव-समाज का चिर-संचित कोष है, जिसको लेकर भावी पीढ़ी अपना काम चलाती है । मानव ने सृष्टि के प्रारंभ से आज तक जो कुछ सोचा, समझा, देखा और अनुभव किया है, उसका ही संकलन भाषा के रूप में विद्यमान है । भाषा मानवजाति का सार सर्वस्व है । अतः इसे रस कहा जाता है । ऋग्वेद में भाषा को अमृत की नाभि, केंद्र और देवों की जिह्वा कहा गया है ।

1.7.3. भाषा के कर्तृत्व, धर्तृत्व और हर्तृत्व के संबंध में डॉ. कपिलदेव का मत

डॉ. कपिलदेव द्विवेदी कहते हैं कि भाषा में कर्तृत्व, धर्तृत्व और हर्तृत्व ये तीनों गुण हैं । समस्त रचनात्मक कार्य, विविध योजनाओं की पूर्ति आर्थिक कार्यक्रम, शिक्षण, ज्ञान-विज्ञान विषयक सभी कार्य भाषा के माध्यम से होते हैं । भाषा ही समाज को धारण करती है ।

1.7.4. भाषा सदसद् बोधिका है

डॉ. कपिलदेव द्विवेदी का विद्वत्तापूर्ण वक्तव्य है कि भाषा मूर्त-अमूर्त, सत्-असत् निर्वचनीय ज्ञान अज्ञान, भाव-अभाव - सभी

प्रकार के अर्थों को प्रकट करती है । शश विषाण अर्थात् खरगोश के सींग ख-पुष्प याने आकाश का फूल आदि अत्यंत अभाव वाली वस्तुओं की भी बोधिक हो जाती है । सूक्ष्म, अनिर्वचनीय आत्मा, परमात्मा, ज्ञान-कल्पना आदि का बोध भाषा के द्वारा हो जाता है ।

1.7.5. श्री टी. एस. तुकाराम रामप्रिय का मत - भाषा की जीवनोद्धार प्रक्रिया के संबंध में

श्री टी.एस. तुकाराम रामप्रिय भाषा को जीवन व आत्मा के उद्धार की प्रक्रिया मानते हैं । भाषा मुख्यतया अनुकरण से सीखी जाती है, परंतु दूसरी भाषाएँ यत्न साध्य होती हैं । मातृ भाषा पर अधिकार शीघ्र हो जाता है, अतः बचपन से ही मातृभाषा स्वाभाविक आत्मोद्‌गार के रूप में बोली जाती है । ज्यों ज्यों भाषाएँ सीखी जाती हैं, त्यों त्यों हम अनुभव करते हैं कि हमारी आत्मा और जीवन का दिन दूना रात चौगुना उत्थान होता जा रहा है ।

1.7.6. सामाजिक दृष्टि से भाषा के प्रमुख उपयोग

1. भाव संप्रेषण - सामाजिक दृष्टि से भाषा का सर्वाधिक व्यवहार भाव संप्रेषण में होता है । समाज का प्रत्येक व्यक्ति अपने भावों व विचारों की आदान प्रदान करता है । यह सामाजिक आदान प्रदान की प्रक्रिया व्यक्ति और समाज को एकान्वित करके एकता की सृष्टि करती है । भावों के आदान-प्रदान के लिये ही समाज भाषा का सर्वाधिक ऋणी है ।

डॉ.कपिलदेव कहते हैं - इसी आदान प्रदान के महत्व को यजुर्वेद में इस प्रकार वर्णित किया गया है - 'तुम मुझे दो, मैं तुम्हें देऊँ, तुम मेरे लिये सुरक्षित रखो, मैं तुम्हारे लिये सुरक्षित रखूँ, तुम मुझे अर्पित करो, और मैं तुम्हें समर्पित करूँ ।' दैनिक व्यवहार एवं सामाजिक धार्मिक-राष्ट्रीय आदि कार्यों में प्रतिक्षण भाषा का भाव संप्रेषण के रूप में सामाजिक व्यवहार होता है ।

2. <u>**संसूचन**</u> - भाषा का दूसरा सामाजिक उपयोग है आवश्यक सूचनाएँ देना । ज्ञान-विज्ञान, कला-संस्कृति आदि के सभी अंगों में आवश्यक सूचना देकर समाज को अग्रसर करना ही इसका उद्देश्य है । इतिहास, भूगोल आदि अतीत व वर्तमान की सूचना देते हैं । पत्र-पत्रिकाएँ, रेडियो, वायरलेस, टेलिविशन आदि इसी प्रक्रिया के अंग हैं ।

3. <u>**उद्बोधन**</u> - उद्बोधन भाषा का सामाजिक पक्ष है । समाज में जागरूकता लाना, कर्त्तव्य की दीक्षा देना, इष्ट मार्ग पर प्रवृत्त करना, राष्ट्रीय एवं सांस्कृतिक कार्यक्रमों में सहयोग की भावना जागृत कराना, देश के शत्रुओं से सावधानी का निर्देश देना, जनमत अनुकूल बनाना आदि ऐसे कार्य हैं, जो साहित्य, समाचार पत्र और प्लेटफार्म के माध्यम से जनता तक पहुँचाये जाते हैं ।

4. <u>**रसास्वादन**</u> - भाषा का चतुर्थ सामाजिक उपयोग है - साहित्य, विश्वसाहित्य एवं विविध भाषा वाङ्मय के द्वारा ज्ञान विज्ञान की वृद्धि करते हुए आत्मिक सुखानुभूति करना व रसास्वादन करना । साहित्य रस-बोध का साधन है, आत्मिक आनंद का दाता है और सुखानुभूति का भावक है । भाषा का यह रसास्वादन पक्ष मानव के जीवन को प्रभावित, संतुलित और स्वस्थ रखने में अत्यंत उपकारी है ।

5. <u>**दर्शन एवं चिंतन**</u> - भाषा का पंचम सामाजिक उपयोग है - दर्शन या चिंतन । भाषा उच्च स्तर पर दार्शनिक हो जाती है ।

1.7.7. भाषा मानव-जीवन की समन्वय जाति है

भाषा में सारे संसार को एक सूत्र में बांध रखने की शक्ति है । भाषा समन्वय सूत्र है । प्रत्येक भाषा स्वभाषाभाषी को एकता के सूत्र में बाँधे रखती है, अतः मानव भिन्न होते हुए भी एकत्व की अनुभूति करते हैं । विश्व भाषा विश्व मानव को एक सूत्र में

समन्वित कर विश्व बंधुत्व का भाव जागृत करती है । ऋग्वेद में भाषा को राष्ट्र अर्थात् राष्ट्र निर्मात्री व संगमनी अर्थात् संबंध करनेवाली कहा गया है ।

1.7.8. भाषा की शक्ति संपन्नता के बारे में डॉ मिताली भट्टाचारजी का मत

डॉ. मितालीजी के अनुसार भाषा में हिमगिरि की शक्ति संपन्नता है । भाषा की महान शक्ति संपन्नता भाषा में नवीन सृष्टि की रचना कर निष्प्राण में चेतना भरती है । ऋग्वेद में इसी बात का उल्लेख मिलता है कि भाषाओं की अनेकरूपता है और पृथक्-पृथक् इनकी स्थिति है, भाषा जन-जीवन में समाविष्ट होकर विश्व को जीवित रखती है ।

1.7.9. भाषा की सर्वव्यापकता के संबंध में डॉ.कपिलदेव द्विवेदी का मत

डॉ.कपिलदेव द्विवेदी कहते हैं कि मानव का प्रत्येक कार्य भाषा द्वारा संचालित है । सभी स्थितियों में मानव का आधार भाषा ही है । मानव के आंतरिक व ब्राह्य कार्य, चिंतन-मनन, अभिव्यंजन व वैयक्तिक और सामाजिक कार्यों के लिए भाषा की सहायता ली जाती है । ज्ञान-विज्ञान व धर्म दर्शन का आधार भाषा ही है ।

1.7.10. आचार्य भर्तृहरि का मत

आचार्य भर्तृहरि ने सभी लौकिक कार्यों का आधार भाषा को माना है । भाषा से ही ज्ञान बढ़ता है और ज्ञान से ही सब काम होते हैं ।

1.8. भाषा संवहन का माध्यम है - डॉ. मिताली भट्टाचारजी का मत

भाषा समस्त जाति को एक सूत्र में बद्ध कर मानवता के समस्त ज्ञान व उपलब्धियों का संवहन करती है, अन्यथा समाज

विश्रृंखल हो जाता है । भाषा, ब्रह्म, विष्णु और रूद्र तीनों का कार्य करती है । ऋग्वेद के वाक् सूत्र के अनुसार भाषा, ऋषि, विद्वान व तेजस्वी रूप प्रदायिका है । उसे समाज का पालक व समाज विरोधी तत्वों का नाशक कहा गया है ।

1.8.1. भाषा मानव की मानसिक शक्ति के विकास की परिचायिका एवं संवहन माध्यम है

अपने व्यापक अर्थ में भाषा मनुष्य के चिरसंचित ज्ञान, अनुभव तथा सभ्यता के विकास का मूलाधार है । वही एक ऐसा साधन भी है जिसके द्वारा मानव अपने इतिहास, साहित्य, विज्ञान व अन्य ज्ञानों को उपलब्ध कराने के साथ उनका प्रचार प्रसार करता है । भाषा मनुष्य की एक प्रकृति-प्रदत्त अद्‌भुत शक्ति है । मनुष्य को एक प्रकार का वाग्यंत्र प्रकृति ने दिया है । उसका मानव के मस्तिष्क से संबंध जोड़कर उसे विश्व का सबसे श्रेष्ठ प्राणी बना दिया है ।

1.8.2. भाषा की संवहन शक्ति के संबंध में डॉ. कपिलदेव का मत

डॉ. कपिलदेव के शब्दों में भाषा वह माध्यम है, जिसके द्वारा मनुष्य अपने भावों व विचारों को दूसरों तक पहुँचाता है । विविध संकेतों और आंगिक साधनों के द्वारा अपना अभिप्राय स्पष्ट रूप से श्रोता तक नहीं पहुँचाया जा सकता है । भाषा के द्वारा अमूर्त भावों को जितनी विशदता से व्यक्त कर सकते हैं, उतना अन्य किसी प्रकार से नहीं । अतएव जैमिनीय ब्राह्मण में मनोभावों को प्रकट करने के करण भाषा को कुल्या व नहर कहा गया है । तांडव महाब्राह्मण में भी भाषा की मनोभावाभिव्यंजना स्वीकार की गई है ।

1.8.3. संवहन माध्यम के रूप में भाषा का व्यवहार

भाषा का व्यवहार तीन स्थितियों से होता है -

1. व्यक्ति - स्वयं के लिये
2. व्यक्ति व दूसरों के लिये
3. व्यक्ति व समाज के लिये ।

1.8.3.1. व्यक्ति का भाषा प्रयोग स्वकीयार्थ

कतिपय विशेष परिस्थितियों में व्यक्ति अपने लिये ही भाषा का प्रयोग करता है । ये परिस्थितियाँ सामान्यतया ये हैं -

1. मनोरंजनार्थ - बच्चों का मनोरंजनार्थ माँ-माँ, पा-पा, चा-चा आदि कहना, युवकों आदि का आनंदातिरेक में गाना आदि ।
2. स्वगत भाषण - प्रेम, श्रद्धा, क्षोभ, क्रोध आदि की अवस्था में प्रायः व्यक्ति अपने भाव अकेले में व्यक्त करते हैं ।
3. जप आदि में - मंत्रों आदि के जप, स्तोत्र-पाठ आदि में व्यक्ति अपने लिये ही भाषा का प्रयोग करता है ।
4. भय निवारणार्थ - एकांत निर्जन वन में जपना
5. कष्ट निवृत्यर्थ - जाड़े में ठंडे जल से स्नान करते समय शीघ्रतापूर्वक किसी स्तोत्र भजन का गाना, शैत्य व कष्ट की न्यूनता या निवृत्ति हेतु पाठ करना ।
6. गंभीर चिंतन - गायक, साधक शिल्पी, वक्ता आदि जब गंभीर चिंतन की मुद्रा में होते हैं, वे एकांत में कुछ बोलते हुए अपने अभीष्ट कार्य का चिंतन एवं विश्लेषण करते रहते हैं ।
7. मनोभावाभिव्यंजना - मनोभाव प्रकाशन के लिये बालक युवा, वृद्ध, योद्धा, अभिनेता आदि अपने आप बात करते हैं । इससे ज्ञात होता है कि भाषा का प्रयोग दूसरे के लिये नहीं, परंतु अपने लिये भी उपयोगी है ।

1.8.3.2. व्यक्ति-व्यक्ति

भाषा का उपयोग स्वयं के बाद व्यक्ति विशेष से संपर्क में आने पर होता है । कुछ परिस्थितियों में यह व्यक्तिगत संपर्क का कार्य करता है ।

1. **शिष्टाचार निर्वाह**

   शिष्टाचार निर्वाह हेतु अनेक प्रसंगों में दूसरे व्यक्ति से कुछ कहना पड़ता है, जैसे - प्रत्येक परिचित व्यक्ति से मिलने पर कुशल प्रश्न पूछना व दूसरे के द्वारा उसका विवरण देना आदि ।

2. **परामर्श एवं मंत्रणा**

   किसी गंभीर विषय पर मंत्रणा करने में, किसी योजना के कार्यान्वयन में परामर्श लेने में व्यक्ति व्यक्ति विशेष से भाषा का प्रयोग करता है ।

3. **दांपत्य संबंध एवं स्नेहमूलक संबंध**

   प्रेमी प्रेमिका, स्नेही, भाई बहन एकांत में परस्पर अपने स्नेह, दुख-सुख एवं राग द्वेष की बातें करते हैं ।

4. **वैयक्तिक संबंध एवं कार्य**

   व्यक्तिगत कार्य मानव-मानव को जोड़ते हैं । व्यक्तिगत कार्य से एक दूसरे से बात करते हैं ।

5. **कार्यार्थ आदेश**

   कार्य को करने हेतु किसी को आदेश देना कि तुम ऐसा करो, आदि प्रसंगों में व्यक्ति व्यक्ति के बीच भाषा का प्रयोग होता है ।

6. **भाव प्रकाशन या आत्माभिव्यक्ति**

   अपने हर्ष-विषाद, राग-विद्वेष, शोक-कष्ट आदि के प्रकाशन हेतु क्षोभ, दुख आदि भावों को व्यक्ति किसी दूसरे व्यक्ति से भाषा के माध्यम से ही प्रकट करता है ।

1.8.3.3. व्यक्ति-समाज

भाषा का सर्वोत्तम उपयोग व्यक्ति को समाज से समन्वित करने का है । भाषा समाज का समन्वय सूत्र है, जिससे समाज समन्वित, संगठित एवं संपृक्त है । भाषा के द्वारा ही व्यक्ति समाज का सजीव सदस्य बनता है । वेदों में कहा गया है कि भाषा राष्ट्रीय, राष्ट्र निर्मात्री व संगमनी समन्वित करनेवाली शक्ति है ।

1.9. भाषा की विशेषताएँ

मानवीय भाषा में कतिपय विशेषताएँ होती हैं, जो मानवेतर जीव पशु-पक्षी की भाषा में नहीं होती हैं । प्रोफसर हॉल भाषा के संबंध में मानव व मानवेतर जीवों की तुलना करते हुए प्रो. हॉकेट का मत उद्धृत करते हैं कि मानवीय भाषा के निम्नलिखित 7 गुण हैं जो मानवेतर जीवों की भाषा में अप्राप्य हैं -

1.9.1. प्रो. सर हॉकेट के विचार

प्रो.हॉकेट के अनुसार ये सात विशेषताएँ निम्नलिखित हैं -

1. **द्वैतता** - प्रत्येक भाषा में दो तत्व अवश्य होते हैं -
   अ) सार्थक ध्वनि आ) सार्थक रूप-अंश ।

2. **उत्पादन क्षमता** - मानवीय भाषा में यह सामर्थ्य है कि वह संघटनात्मक ऐसे वाक्यों की भी रचना कर सकती है जिन्हें वक्ता व श्रोता ने उससे पूर्व न कहा या सुना हो, पर दोनों पक्ष उसे सरलता से समझ सकते हों ।

3. **प्रेषण व ग्रहण में परिवर्तनशीलता** - मानवीय भाषा में प्रेषण व ग्रहण में परस्पर परिवर्तनशीलता की क्षमता है । भाषा का उपयोग करनेवाला कोई भी व्यक्ति अपने भावों को दूसरे तक पहुँचाता है और साथ ही दूसरे के द्वारा कहे गये वक्तव्य को सुन समझ सकता है ।

4. **भाषा में विशेषीकरण** - मानवीय भाषा की अपनी एक विशेष पद्धति है जिसके द्वारा अपने ढाँचे और अर्थ में सीमित रहती हुई वह भाव संप्रेषण का कार्य सरलता से करती है । अपने बोध्य कार्य या क्रिया से साक्षात् भौतिक संबंध नहीं के बराबर होता है ।

5. **भाव-अभाव, मूर्त अमूर्त का द्योतक**

मानवीय भाषा भाव-अभाव, मूर्त-अमूर्त सभी प्रकार के अर्थों की अभिव्यक्ति के लिये प्रयुक्त है । इसी प्रकार पाप-पुण्य, स्वर्ग नरक, परमात्मा ब्रह्म आदि का बोध कराया जाता है । आकाश-कुसुम, व्योमपुरी, वन्ध्या पुत्र आदि सर्वथा अभावात्मक का भी द्योतन भाषा द्वारा किया जाता है ।

6. **सांस्कृतिक परम्परागत**

मानवीय भाषा पैतृक परम्परा से नहीं, अपितु शिक्षा द्वारा एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति तक संप्रेषित करता है । हम अपने अर्जित ज्ञान को अगली पीढ़ी को देते हैं । यह भाषा का ही महत्व है । मानवीय ज्ञान संगृहीत कर भावी पीढ़ी को नये ढंग से शून्य से ज्ञान शुद्ध करते हुए नये वाङ्मय तैयार करना पड़ता है । पूर्वजों के ज्ञान का लाभ उठाते हुए नर को शीघ्र ज्ञान वृद्धि का अवसर मिलता है ।

1.9.2. भाषा के विराट स्वरूप के संबंध में डॉ.मिताली भट्टाचारजी का मत

डॉ. मितालीजी के शब्दों में - ब्रह्म के समान भाषा का रूप विराट है । ज्ञान विज्ञान के सभी अंश भाषा में समाहित हैं । जिस प्रकार ब्रह्म के विराट रूप में ब्रह्मांड के ग्रह-उपग्रह, एवं सभी अंतरिक्ष सौर-मंडल समाविष्ट हैं, उसी प्रकार भाषा के वाङ्मय में सब कुछ संगृहीत होता है ।

1.9.3. शतपथ ब्राह्मण व यजुर्वेद के मत

शतपथ ब्राह्मण के अनुसार भाषा विराट् है । यजुर्वेद में वाक्तत्व भाषा को विश्वकर्मा नाम दिया जाता है । शतपथ ब्राह्मण के अनुसार भाषा के द्वारा विश्व के सभी कर्म किये जाते हैं, अतः वाणी को विश्वकर्मा कहते हैं । भाषा में सब कुछ कर सकने की शक्ति है ।

1.9.4. भाषा सर्वोत्तम ज्योति है

भाषा ही संसार की सर्वोत्कृष्ट ज्योति है, जो मानव हृदय के तमस्तोम को दूर करती है । यह ज्ञान-ज्योति ही विश्व के समस्त मानवों का कार्य कलाप सिद्ध करती है । यह कल्पना भी नहीं की जा सकती है कि भाषा के बिना मानव की क्या दयनीय स्थिति होती है । भाषा ही ज्ञान को प्रकाशित करती है ।

1.10. निष्कर्ष

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि भाषा भाव एवं विचारों की अभिव्यक्ति का सर्वोत्तम साधन है, जिसके माध्यम से मानवजाति ज्ञान विज्ञान की अपनी अनंत संपत्ति को अनादि अनंत काल से संचित करती आ रही है । ध्वनि, शब्द, रूप, पद, अर्थ, वाक्य, प्रोक्ति आदि से निर्मित भाषा मानव जाति की अतुल्य रत्न खनि है । भाषा के कारण ही मानव सृष्टि की अनंत जीवकोटि में विशिष्टता प्राप्त कर सका है । भाषा बहता नीर है । वह नित्य परिवर्तनशील है । भाषा की प्रकृति मानव की प्रकृति के समान ही सदा प्रगतिशील है । संवहन माध्यम के रूप में भाषा मानव जाति के उज्ज्वल विचार, भाव, संस्कृति, सिद्धांत, वैज्ञानिक उपलब्धियाँ आदि को वहन पर माता की तरह ज्ञान का दुग्ध हमें प्रदान कर रही है । मानव-जीवन में भाषा का वही स्थान है जो स्थान शरीर में मन और मस्तिष्क का है ।

1.11. सारांश

प्रस्तुत इकाई में भाषा विज्ञान के कतिपय विशेष अंश यथा भाषा की परिभाषाएँ, उसकी प्रकृति एवं महत्व के बारे में जानकारी प्राप्त करायी गयी है । विभिन्न विद्वानों द्वारा प्रदत्त परिभाषाएँ यहाँ उल्लिखित हैं । वी. ब्लोच, जी.एल ड्रागर प्रभृति द्वारा दी गई परिभाषाओं पर प्रकाश डाला गया है । भाषा की प्रकृति के विभिन्न आयामों को स्पष्टतः समझाया गया है । भाषा का कोई स्थायी रूप नहीं होता अथवा उसके परिवर्तन की सीमा नहीं होती है । भाषा मानव की पूँजी है । वह नित्यनूतन व गतिशील है । भाषा की महत्ता अत्यंत विराट है । तत्संबंधी विचार भी इस घटक में प्रस्तुत किये गये हैं ।

1.12. बोध प्रश्न

1. विभिन्न विद्वानों द्वारा प्रदत्त भाषा की परिभाषाएँ उद्धृत करते हुए उसकी प्रकृति का विवेचन कीजिए ।
2. टिप्पणी लिखिए -
   i) भाषा संवहन माध्यम है ।

1.13. उत्तर के अंश - अभ्यास के प्रश्नों के संबंध में

1. भाषा की परिभाषा एवं उसकी प्रकृति

भाषा मानव-जीवन में अत्यंत महत्वपूर्ण है । बी. ब्लोच, जी. एल. ड्रागर आदि ने इस संबंध में अनेक विचार प्रस्तुत किये हैं । साथ ही उसकी परिभाषा प्रांजल शब्दों में दी है । भाषा की अपनी विशिष्ट प्रकृति होती है । उसका कोई स्थायी रूप नहीं होता है । उसकी भौगोलिक सीमा होती है । वह नित्यनूतन व गतिशील है । मानव-जीवन में उसका महत्व अत्यंत विराट है ! भाषा किसी की पैतृक संपत्ति नहीं होती । यह अनुकरण, व्यवहार एवं अभ्यास से अर्जित की जाती है । हर एक भाषा की अपनी पृथक् प्रकृति होती

है, जो अपने आप में स्वतंत्र है । उत्तर में भाषा की प्रकृति के अन्य अंशों का विवेचन अपेक्षित है ।

भाषा का महत्व - भाषा मानव के मन व मस्तिष्क की अभिव्यक्ति का सर्वोच्च माध्यम है । भर्तृहरि के अनुसार संसार में कोई ऐसा विषय नहीं है, जो शब्द का आश्रय न लेता हो । समस्त ज्ञान शब्द से ही उत्पन्न होता है ।

भाषा विज्ञान में भाषा का अर्थ - यद्यपि पशु - पक्षियों की बोली, इंगित आदि को भी भाषा शब्द के द्वारा ग्रहण किया जाता है, तथापि भाषा विज्ञान में मानवीय भाषा को ही भाषा के अर्थ में लिया जाता है । यह भाषा का संकुचित अर्थ है । डॉ. मिताली भट्टाचारजी इसी अर्थ का समर्थन करती हैं ।

भाषा की परिभाषा - ध्वनि चिह्नों द्वारा मानव आपस में विचार विनिमय करते हैं । उसको समष्टि रूप से भाषा कहते हैं । 'भाषा' शब्द की व्युत्पत्ति संस्कृत की 'भाष्' धातु से हुई है ।

पाणिनि का मत - पाणिनि के अनुसार भाषा वही है, जिसके द्वारा मानव भाव, विचार व इच्छाओं को व्यक्त करता है।

उत्तर को व्यापक परिवेश एवं अर्थवत्ता देने हेतु भर्तृहरि, हरीशशर्मा, बाबूराम सक्सेना, श्री धुनीचंद, डॉ. पी.डी. गुणे, श्री कामता प्रसाद गुरू, सरयू प्रसाद अग्रवाल, डॉ. भोलानाथ तिवारी, डॉ. मितालीजी आदि के द्वारा प्रदत्त परिभाषाओं को उद्धृत करना आवश्यक है । पाश्चात्य एवं पौर्वात्य भाषाविदों ने भाषा को ज्ञान ज्योति और अक्षय सम्पत्ति कहा है ।

भाषा की प्रकृति - भाषा एक पद्धति है । मानव की प्रकृति की तरह भाषा भी सदा परिवर्तनशील है । डॉ.मिताली जी नित्यनूतन प्रवहिष्णुता को भाषा की प्रकृति का प्रधान तत्व मानती हैं ।

भाषा की प्रकृति के कई तत्व हैं । उनमें मुख्य हैं -

1. भाषा का प्रधान तत्व नित्य नूतन प्रवहिष्णुता है ।
2. भाषा समुद्रवत् अनंत और ज्ञानरत्न-पूरित है - ऋग्वेद ।
3. भाषा स्थूलता से सूक्ष्मता की दिशा में जाती है।
4. भाषा अप्रौढ़ता से प्रौढ़ता की ओर जाती है ।
5. भाषा की प्रकृति में अनंत ग्रहण शक्ति है ।
6. भाषा स्रवंति कठिनता से सरलता की ओर बहती है ।
7. भाषा संयोगावस्था से वियोगावस्था की ओर अग्रसर होती है ।
8. भाषा अर्जित संपत्ति है ।
9. भाषा की प्रकृति में विविधता एवं अनेकता के साथ एकता व स्थिरता भी निहित है ।
10. भाषा सदा परिवर्तनशील है । परिवर्तन उसकी संजीवनी शक्ति है । डॉ. कपिलदेव के शब्दों में नित्य परिवर्तन भाषा के विकास का चिह्न है ।
11. भाषा का कोई अंतिम रूप नहीं होता ।
12. भाषा की भौगोलिक सीमा होती है ।
13. भाषा की ऐतिहासिक सीमा होती है ।
14. भाषा रूपी नदी के जल की गतिशीलता उसे पवित्र रखती है - ऋग्वेद ।
15. भाषा सहज स्वाभाविक क्रिया है ।
16. भाषा सीखने की प्रक्रियाओं में अनुकरण मुख्य है ।
17. प्रत्येक भाषा की संरचना पृथक् होती है ।
18. भाषा सर्वतंत्र स्वतंत्र है ।
19. परिवर्तन पहले भाषा के उच्चरित रूप में होता है।
20. भाषा में विरोधी शक्तियाँ, यथा -स्थिरीकरण, अस्थिरीकरण एवं केन्द्राभिगामी-केन्द्रापगामी शक्तियाँ काम करती हैं ।
21. भाषा में परम्परागत गुण है ।

22. भाषा में प्रतीकात्मक सांकेतिक ध्वनियों का प्रयोग होता है।
23. भाषा में स्वेच्छागत यादृच्छिक वाग्ध्वनियों की समृद्धि होती है ।

उपर्युक्त अंशों के अतिरिक्त मानव-जीवन में भाषा का महत्व, भाषा का संवहन माध्यम रूप, भाषा की रसास्वादनशक्ति, उसकी ग्रहण शक्ति संपन्नता, सर्व विषयाभिव्यक्ति संपन्नता आदि पर प्रकाश डालना आवश्यक है ।

2. टिप्पणी

भाषा संवहन का माध्यम है

डॉ. मिताली भट्टाचार्यजी के अनुसार भाषा समस्त जगत को एक सूत्र में बाँधकर मानवता के समस्त ज्ञान व उपलब्धियों का संवहन करती है, अन्यथा ज्ञान विश्रृंखल हो जाता है । भाषा ब्रह्मा, विष्णु व रूद्र तीनों का कार्य करती है । ऋग्वेद के वाक्सूत्र के अनुसार भाषा ऋषि-मुनि-तेजस्वी विद्वान् रूप प्रदायिका है । उसे समाज का पालक एवं समाज विरोधी तत्वों का नाशक कहा गया है । भाषा ज्ञान-संपत्ति की संवाहिका है । सामाजिक संपत्ति के रूप में वह पीढ़ी-दर-पीढ़ी को प्राप्त होती है । डॉ. कपिलदेव के शब्दों में वह मानवता की पूँजी है । भाषा सीखते हुए हम अनुभव करते हैं कि हमारे मन, मस्तिष्क, आत्मा एवं जीवन का दिन दूना रात चौगुना उत्थान हो रहा है ।

श्री टी. एस. तुकाराम का मत

श्री टी.एस. तुकाराम भाषा को संवहन माध्यम के रूप में जीवनोद्धार प्रक्रिया मानते हैं । भाषा साहित्यिक, धार्मिक, दार्शनिक, राष्ट्रीय, वैज्ञानिक आदि क्षेत्रों में मानव द्वारा संपादित ज्ञान विज्ञान संपत्ति को आगामी पीढ़ियों के हस्तों में धरती है ।

VOP - /7 - 145

संवहन माध्यम के रूप में भाषा संसूचन, उद्‌बोधन, रसास्वादन दर्शन व चिंतन की वैभवश्री मानवता को प्रदान करती है ।

भाषा मानव-जीवन की समन्वय ज्योति व ऊर्जा स्रोत है । प्रकृति प्रदत्त यह अद्‌भुत शक्ति मानव के सर्वतोमुखी विकास का मूल है । भाषा मानव, समाज, विश्व व आगामी युगों तक ज्ञान व अनुभव को पहुँचाने हेतु निर्मित सेतुश्री है ।

उपर्युक्त अंशों के अतिरिक्त भाषा की विशेषताएँ, उसके विराट स्वरूप आदि का उल्लेख करना आवश्यक है ।

1.14. शब्दावली

1.	घटक	-	Unit
2.	भाषा विज्ञान	-	Linguistics, Philology
3.	इकाई	-	Unit
4.	प्रस्तावना	-	Introduction
5.	परिभाषा	-	Definition
6.	प्रकृति	-	Nature
7.	माध्यम	-	Medium
8.	अभिव्यक्ति	-	Expression
9.	धारा	-	Stream
10.	सरलता	-	Simplicity
11.	ध्वनि	-	Sound
12.	नियम	-	Law
13	बोली	-	Dialect
14.	विकार	-	Change
15.	वर्ग	-	Class
16.	भाषा विज्ञानी/भाषा वैज्ञानिक	-	Philologist

1.15. संदर्भ ग्रंथ एवं निबंध

1. भाषा विज्ञान - डॉ.भोलानाथ तिवारी
2. भाषा विज्ञान और हिन्दी - डॉ.सरयूप्रसाद अग्रवाल
3. भाषा विज्ञान और हिन्दी भाषा
4. भाषा विज्ञान एवं भाषा शास्त्र - डॉ.कपिलदेव द्विवेदी
5. भारतीय आर्य भाषा और हिन्दी- डॉ.सुनीतकुमार चटर्जी
6. सामान्य भाषा विज्ञान - डॉ.बाबूराम सक्सेना
7. भाषा रहस्य - डॉ.श्याम सुंदरदास
8. भाषा विज्ञान की भूमिका - डॉ.देवेन्द्रनाथ शर्मा
9. हिन्दी भाषा विज्ञान परिचय - डॉ. ज्ञानराज काशीनाथ गायकवाड़

निबंध

1. भाषा के तत्व - डॉ. मिताली भट्टाचारजी ।

NOTES

इकाई दो : भाषा के विभिन्न रूप, भाषा और बोली

इकाई की रूपरेखा

2.0. प्रस्तावना

2.1. उद्देश्य

2.2. भाषा के विभिन्न रूप

2.3. भाषा के विभिन्न रूपों के बारे में वांद्रियैज एवं डॉ. मिताली जी के मत

2.4. भाषा और समाज

- 2.4.1. भाषा के तीन पक्षः ए सैस्युर का मत
- 2.4.2. भाषा का सामाजिक पक्ष
- 2.4.3. भाषा के सामान्य एवं सर्वव्यापक रूप के संबंध में डॉ.सरयूप्रसाद अग्रवाल के विचार
- 2.4.4. भाषा के अनेक रूप
  - 2.4.4.1. इतिहास के आधार पर भाषा-भेद
  - 2.4.4.2. भूगोल के आधार पर भाषा-भेद
  - 2.4.4.3. प्रयोग के आधार पर भाषा-भेद
  - 2.4.4.4. निर्माता के आधार पर भाषा भेद

2.5. भाषा के रूप एवं प्रकार

- 2.5.1. परिनिष्ठित भाषा
- 2.5.2. भाषा विज्ञान कोश में प्रदत्त परिनिष्ठित भाषा की परिभाषा

2.6. परिनिष्ठित भाषा की महत्ता

2.7. बोली

2.7.1. पात्वा की चार विशेषताएँ

2.8. विभाषा

2.8.1. विभाषा की परिभाषा

2.8.2. विभाषा और बोली

2.9. बोली और भाषा की स्थानोन्नति

2.9.1. बोली और भाषा में अंतर

2.9.2. भाषा और बोली की भिन्नता व अभिन्नता

2.9.3. भाषा और बोली में भिन्नता के तत्व

2.9.4. भाषा और बोली के पारस्परिक संबंध एवं अंतर

2.10. अपभाषा

2.11. विशिष्ट या व्यावसायिक भाषा

2.12. गुप्त भाषा या कूट भाषा

2.13. मिश्रित भाषा

2.14. कृत्रिम भाषा

2.15. राष्ट्रभाषा

2.16. राज्यभाषा या राजभाषा

2.16.1. राजभाषा के संबंध में डॉ.ज्ञानराज काशीनाथ के विचार

2.17. अंतर्राष्ट्रीय भाषा

2.18. साहित्यिक भाषा

2.19. व्यक्ति बोली

2.20. भाषण विधियों के भेद से भाषा-भेद

2.21. प्रो. जॉन केनियन का भाषा वर्गीकरण

2.22. साहित्यिक भाषा और जनभाषा

2.23. जनभाषा अकृत्रिम होती है

2.23.1. जनभाषा में गतिशीलता होती है

2.23.2. जनभाषा में संकीर्णता नहीं होती

2.23.3. जनभाषा में सजीवता होती है

2.23.4. जनभाषा में पूर्वाग्रह दोष नहीं होता

2.24. मूलभाषा

2.25. निष्कर्ष

2.26. सारांश

2.27. बोध प्रश्न

2.28. उत्तर के अंश

2.29. शब्दावली

2.30. संदर्भ ग्रंथ

2.0. प्रस्तावना

संसार में अनगिनत भाषाएँ हैं । जितने व्यक्ति हैं उतनी ही भाषाएँ हैं, उतनी ही बोलियाँ हैं । शिक्षा, संस्कृति, व्यवसाय तथा परिवेश भी प्रत्येक व्यक्ति की भाषा को प्रभावित करते हैं । इनके अतिरिक्त भौगोलिक पर्यावरण, इतिहास, राजनीति व आर्थिक - सामाजिक परिस्थितियाँ भी भाषा को अनेक रूप देती हैं । हर एक व्यक्ति समाज में रहकर ही भाषा को सीखता है । भाषा समाज की देन है । प्रत्येक व्यक्ति की भाषा पर उसकी निजी मानसिक, शारीरिक तथा बौद्धिक योग्यता का भी प्रभाव पड़ता है । अतः किन्हीं दो व्यक्तियों की भाषा के सुनने एवं कहने में अधिक अंतर होता है । भिन्न भिन्न कारणों से भाषा में परिवर्तन आ जाते हैं, यथा-शिक्षा, भौगोलिक व्यक्तिगत परिवेश आदि ।

अतः परिनिष्ठित / आदर्श भाषा, विभाषा, बोली, अपभाषा, विकृत भाषा, गुप्त भाषा, मिश्रित भाषा, कृत्रिम भाषा, राष्ट्रभाषा, राजभाषा, व्यक्ति बोली, मूलभाषा आदि भाषा के विभिन्न रूप भी दृग्गोचर होते हैं ।

बोली और भाषा में निम्नलिखित अन्तर दिखाई देते हैं -

1. भाषा का क्षेत्र बड़ा होता है, बोली का क्षेत्र छोटा होता है ।
2. भाषा में प्रचुर साहित्य उपलब्ध होता है, बोली में साहित्य नहीं या अत्यल्प होता है ।
3. बोली भाषा से उत्पन्न है । अतः भाषा और बोली का माता-पुत्री का संबध है ।
4. भाषा शिक्षा का माध्यम होती है, जब कि बोली लोक साहित्य, लोकगीत एवं बोलचाल तक सीमित रहती है ।
5. एक भाषा-जन्य बोलियाँ कुछ अंतर से भिन्न होने पर भी परस्पर बोधगम्य होती हैं ।
6. एक भाषा की अनेकानेक बोलियाँ हो सकती हैं ।

2.1. उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई में भाषा के विभिन्न रूपों के बारे में पाठकों को परिचित कराया जा रहा है । भाषा के सामाजिक एवं सर्वव्यापक पक्षों पर भी प्रकाश डाला जाता है । कुछ आलोचकों ने भाषा के अनेक रूपों को काल-भेद, स्थान-भेद, देश-भेद, स्तर-भेद आदि के आधार पर विभाजित किया है और चार आधार बताये हैं, यथा -

i) इतिहास ii) भूगोल iii) प्रयोग iv) निर्माता ।

कुछ विद्वानों ने निम्नलिखित भेद बताये हैं, जैसे -

i) परिनिष्ठित या आदर्श भाषा
ii) विभाषा या बोली
iii) अपभाषा या विकृत भाषा
iv) विशिष्ट या व्यावसायिक भाषा
v) गुप्त या कूट भाषा
vi) मिश्रित भाषा
vii) कृत्रिम भाषा
viii) राष्ट्रभाषा
ix) राजभाषा
x) साहित्यिक भाषा
xi) व्यक्ति बोली
xii) मूल भाषा ।

कतिपय पाश्चात्य आलोचकों एवं भाषा शास्त्रियों के अनुसार भाषाओं के सात भेद हैं -

i) साहित्यिक मानक भाषा
ii) बोलचाल का मानक रूप
iii) प्रांतीय मानक रूप
iv) उपमानक रूप
v) स्थानीय बोली

vi) औपचारिक बोली

vii) अनौपचारिक बोली ।

इन सब से पाठकों को अवगत कराना ही इस इकाई का लक्ष्य है ।

शुद्ध रूप का ज्ञान प्रदान करना - विभिन्न रूपों में श्रेष्ठ रूप का उद्‌घाटन करना, भाषा की कार्यशक्ति को प्रकाश में लाना एवं भाषा की सामाजिक शक्ति के निर्माण से पाठकों को अवगत कराना भी इस इकाई का एक लक्ष्य है ।

सामाजिकता को प्रवर्द्धिति करना भी एक लक्ष्य है । **बोली भाषा** की छोटी इकाई है । इसका संबंध ग्राम या मंडल से रहता है । इसमें व्यक्तिगत बोली की प्रधनता होती है । इसमें घरेलू शब्द व देशज शब्दों का भी प्रभाव रहता है । यह मुख्य रूप से बोलचाल की भाषा होती है । इसमें साहित्यिक रचना आदि का अभाव रहता है । एक विभाषा में स्थानीय भेदों के आधार पर कई बोलियाँ प्रचलित रहती हैं ।

भाषा के तीन पक्ष होते हैं - व्यक्तिगत, सामाजिक एवं सामान्य या सर्वव्यापक । मानव प्रयुक्त निजी भाषा व्यक्तिगत होती है । भाषा समाज में प्रयुक्त विशिष्ट साधन है । भाषा का संबंध केवल व्यक्ति या समाज विशेष तक सीमित नहीं है, वह देश, काल तथा जाति की सीमाओं से अतीत विश्व भर के मानवों की संपत्ति है, क्योंकि मनुष्य मात्र इसके माध्यम से अपने भाव और विचारों को परस्पर एक दूसरे तक अभिव्यक्त करते हैं । भाषा के संबंध में सबसे रोचक तथ्य यही है कि कुछ ध्वनियाँ इतनी व्यापक होती हैं, जिनके द्वारा विश्व भर के मानव अपने सुख-दुख, क्षोभ, आश्चर्य, उल्लास आदि की अभिव्यक्ति करते हैं । इनके परस्पर संप्रेषण में भाषागत कोई अंतर भी दृष्टिगत नहीं होता ।

भाषा के सर्वव्यापक रूप को 'सर्व सामान्य' कहा जाता है । द सैस्युर ने इसी को लाँग्वेज़ की संज्ञा दी है । भाषा के रूप

निर्धारिण में कई आधार सक्रिय हैं, यथा -

इतिहास - संस्कृत, पाली, प्राकृत आदि का ऐतिहासिक रूप निर्धारक

भूगोल - प्रांतीय भाषाओं व बोलियों के सीमा निर्धारण में

प्रचलन - जीवित व मृत - भाषा रूप निर्धारक है ।

निर्माण - स्वाभाविक - कृत्रिम भाषा रूप के निर्माण में

स्वरूप - शुद्ध अशुद्ध भाषा रूप के निर्धारण में ।

विभाषा की परिभाषा

किसी सीमित क्षेत्र या भूभाग के जनसाधारण द्वारा बोली जानेवाली उपभाषा को विभाषा कहते हैं ।

विभाषा और बोली

विभाषा के क्षेत्र में कई बोलियाँ प्रयुक्त होती हैं । परिनिष्ठित भाषा के क्षेत्र में अनेक बोलियों का प्रयोग होता है । ये बोलियाँ अपनी शब्द उच्चारण-प्रक्रिया, वाक्यरचना आदि के रूप में अन्य भाषाओं से भिन्न होती हैं । इनका अपना निजी व्यक्तिगत स्वरूप होता है । उस पर किसी सीमित क्षेत्र की स्पष्ट छाप दिखलाई पड़ती है । हिन्दी की विभिन्न बोलियाँ हैं व्रज, अवधी, खड़ी बोली, कन्नौजी, भोजपुरी, मैथिली आदि ।

विभाषा के संबंध में डॉ.मिताली भट्टाचारजी कहती हैं कि इसका क्षेत्र बोली की अपेक्षा विस्तृत होता है । विभाषा एक प्रांत या सूबे में बोली जाती है । उसमें अपना साहित्य भी प्राप्त है, यथा - खड़ी बोली, भोजपुरी, अवधी, ब्रजभाषा आदि में । अपना स्थान बोली से अधिक बनाती हुई विभाषा उन्नत स्तर पर प्रचलित होकर भाषा का स्थान प्राप्त कर लेती है, यथा - खड़ी बोली विभाषा होते हुए भी राष्ट्रीय स्तर पर स्वीकृत होकर राष्ट्रभाषा के पद पर अधिष्ठित हुई है ।

एक विभाषा में स्थानीय भेदों के आधार पर कई बोलियाँ प्रचलित रहती हैं । तदर्थ फ्रांसीसी शब्द 'पात्वा' प्रचलित है । पात्वा

'डायलेक्ट' का छोटा स्थानीयरूप है । यह साहित्यिक भाषा नहीं होती है । यह व्याकरण की दृष्टि से असाधु भाषा है । इसके प्रयोक्ता अशिक्षित या निम्न स्तर के व्यक्ति होते हैं । पात्वा की विशेषता अधिकांशतः बोली में प्राप्त है ।

इन सबका ज्ञान पाठकों को प्राप्त कराना की इस घटक का मुख्योद्देश्य है ।

2.2. भाषा के विभिन्न रूप

जितने मानव हैं, उतनी ही भाषाएँ या बोलियाँ हैं । प्रत्येक वक्ता व श्रोता की भाषा या बोली में एक दूसरे से अंतर दिखाई देता है । शिक्षा, संस्कृति, व्यवसाय तथा पर्यावरण, व्यक्ति की भाषा को प्रभावित करते हैं । इतिहास, राजनीति, आर्थिक दशा तथा अन्य परिस्थितियाँ भी भाषा के रूपायन में योग देती हैं ।

2.3. भाषा के विभिन्न रूपों के संबंध में वांद्रियैज एवं डॉ. मिताली जी के मत

भाषावैज्ञानिक वान्द्रियैज लिखते हैं -

'यह कल्पना मिथ्या नहीं कि विश्व में जितने व्यक्ति हैं, उतनी ही भाषाएँ भी हैं ।

भाषा भिन्नता के संबंध में डॉ.मिताली भट्टाचारजी के विचार

डॉ.मिताली भट्टाचारजी के अनुसार शैली, योग्यता व संस्कार के अनुसार व्यक्ति-व्यक्ति की भाषा में भिन्नता आ जाती है । जितने मन हैं, उतनी भाषाएँ हैं ।

2.4. भाषा तथा समाज

व्यक्ति भाषा को समाज में रहकर ही सीखता है । भाषा समाज की देन है । भाषा के विकास में व्यक्ति की अपनी मानसिक, शारीरिक तथा बौद्धिक योग्यता का भी प्रभाव पड़ता है । अतः किन्हीं दो व्यक्तियों की भाषा एक जैसी नहीं होती ।

2.4.1. भाषा के तीन पक्षः सैस्युर का मत

प्रसिद्ध फ्रांसीसी भाषा वैज्ञानिक ए.सैस्यूर भाषा के तीन पक्ष बतलाते हैं -

1. व्यक्तिगत
2. सामाजिक एवं
3. सामान्य या सर्वव्यापक ।

2.4.2. भाषा का सामाजिक पक्ष

भाषा का सामाजिक पक्ष सुज्ञात है । सामाजिक वरदान होने के साथ साथ भाषा सामाजिक सम्प्रेषण का सबसे महत्वपूर्ण साधन भी है । भाषा का सामाजिक उपयोग सर्व विदित है ।

2.4.3. भाषा के सामान्य एवं सर्वव्यापक रूप के संबंध में डॉ. सरयूप्रसाद अग्रवाल के विचार

डॉ.सरयूप्रसाद अग्रवाल के शब्दों में - भाषा का संबंध केवल व्यक्ति या समाज विशेष तक सीमित नहीं है । वह देश, काल तथा जाति की सीमाओं को लाँघकर विश्व भर के मानवों की संपत्ति बनती है, क्योंकि मनुष्य-मात्र इसके माध्यम से अपने भाव व विचारों को परस्पर एक-दूसरे तक अभिव्यक्त करते हैं । भाषा के संबंध में सबसे रोचक तथ्य यह है कि कुछ ध्वनियाँ इतनी व्यापक होती हैं, जिनके द्वारा विश्व भर के मानव अपने सुख, दुख, क्षोभ, आश्चर्य, उल्लास, विषाद आदि की अभिव्यक्ति करते हैं । इनके परस्पर सम्प्रेषण में भाषागत कोई अंतर भी दृष्टिगत नहीं होता ।

2.4.4. भाषा के अनेक रूप

भाषा वह इकाई है, जिसका संबंध मानव-जाति के सबसे छोटे अवयव व्यक्ति से लेकर विश्वमानव की समष्टि तक है । काल-भेद, स्थान-भेद, देश-भेद, स्तर भेद आदि के आधार पर भाषाओं की अनेक रूपता दृष्टिगोचर होती है । डॉ.कपिलदेव भाषा की अनेक रूपता के चार आधार बताते हैं -

1. इतिहास
2. भूगोल
3. प्रयोग
4. निर्माता ।

2.4.4.1. इतिहास के आधार पर भाषा-भेद

सर्वप्रथम वैदिक संस्कृत, उसके बाद साहित्यिक संस्कृत, फिर पाली, तत्पश्चात् प्राकृत, उससे अपभ्रंश फिर आधुनिक आर्य भाषाएँ-संस्कृत से वर्तमान आर्य भाषाओं तक के आधार ही ऐतिहासिक हैं । काल क्रम से भाषा में भेद आता है और इस भेद के आधार पर भाषा में परिवर्तन व रूपान्तरण होता है । विश्व की प्राचीन भाषा में इस प्रकार का परिवर्तन द्रष्टव्य है । इस परिवर्तन का कारण काल-भेद या इतिहास है ।

2.4.4.2. भूगोल के आधार पर भाषा-भेद

भौगोलिक आधार पर भाषा के जो अनेक रूप हो जाते हैं, उनके आधार पर उनके पृथक् नाम रखे जाते हैं । अपभ्रंश से विभिन्न आधुनिक भारतीय भाषाएँ निकली हैं और भौगोलिक या प्रान्तीय आधार पर उनके अनेक रूप आ गये हैं, जैसे - हिन्दी, मराठी, राजस्थानी, गुजराती, पंजाबी, भोजपुरी, बिहारी, उड़िया, बंगाली आदि ।

2.4.4.3. प्रयोग के आधार पर भाषा-भेद

प्रयोग के आधार पर भाषा के अनेक रूप होते हैं । प्रयोक्ता के वर्ग, धर्म आदि के अनुसार भाषा के अनेक रूप हो जाते हैं, जैसे साहित्यिक भाषा, राज्यभाषा, राष्ट्रभाषा, शुद्ध भाषा, अशुद्ध भाषा, ग्रामीण भाषा आदि । प्रयोग के तीन आधार हैं - 1. प्रयोग का क्षेत्र 2. साधुत्व 3. प्रचलन-भाषा प्रचलित है - जीवित या मृत ।

2.4.4.4. निर्माता के आधार पर भाषा भेद

निर्माता व स्तर के आधार पर भी भाषा के अनेक रूप होते हैं । यदि किसी भाषा का निर्माता समाज या देश है, तो उस भाषा का क्षेत्र विस्तृत होता है । वह परम्परागत रूप से प्रचलित रहती है । समाज की स्वीकृति के कारण वह भाषा का स्थान लेती है । इसके विपरीत यदि भाषा का संबंध व्यक्ति विशेष से है या छोटे वर्ग से है, तो वह कृत्रिम भाषा या बोली का स्थान ले पाती है । भाषा के अन्य गौण आधारों के अनुसार भी कई भेद बनाये गये हैं - यथा संस्कृति, ग्राह्यता, सुबोधता, मिश्रण आदि के आधार पर अनेकानेक भेद संभव हैं ।

2.5. भाषा के रूप एवं प्रकार

भाषा के कई प्रकार दृग्गोचर होते हैं, यथा -

1. परिनिष्ठित या आदर्श भाषा
2. विभाषा
3. उपभाषा
4. बोली
5. अपभाषा या विकृत भाषा
6. विशिष्ट भाषा / व्यावसायिक भाषा
7. गुप्त भाषा / कूट भाषा
8. मिश्रित भाषा
9. कृत्रिम भाषा
10. राष्ट्रभाषा
11. राजभाषा
12. साहित्यिक भाषा
13. व्यक्ति बोली
14. मूल भाषा ।

2.5.1. परिनिष्ठित भाषा

'भाषा विज्ञान एवं हिन्दी भाषा' ग्रंथ के अनुसार परिनिष्ठित अथवा आदर्श भाषा की परिभाषा यह है - जब कोई भाषा व्याकरण-सम्मत नियमों से व्यवस्थित होकर सभ्य एवं शिक्षित समाज के दैनिक जीवन तथा साहित्यिक कार्यों में प्रयुक्त होती है, उसे परिनिष्ठित या आदर्श भाषा कहते हें । यह 'टकसाली भाषा' भी कहलाती है । अंग्रेज़ी में इसे 'KOINE' कहते हैं ।

2.5.2. भाषा विज्ञान कोश में प्रदत्त परिनिष्ठित भाषा की परिभाषा

भाषा विज्ञान कोश में परिनिष्ठित भाषा की व्याख्या इस प्रकार की गई है - "किसी भाषा की उस विभाषा को परिनिष्ठित भाषा कहते हैं, जो अन्य विभाषाओं पर अपनी साहित्यिक एवं सांस्कृतिक श्रेष्ठता स्थापित कर लेती है और उन विभाषाओं के बोलनेवाले भी उस भाषा को सर्वाधिक उपयुक्त समझते हैं ।"

2.6. परिनिष्ठित भाषा की महत्ता

परिनिष्ठित भाषा ही किसी सभ्य समाज की भाषा होती है । इसके माध्यम से ही शिक्षित जन परस्पर पत्र व्यवहार, भाषण, साहित्य रचना तथा अन्य महत्वपूर्ण कार्य करते हैं । संसार की प्रमुख भाषाएँ-संस्कृत, हिन्दी, अंग्रेज़ी, जर्मन, फ्रांसीसी, ग्रीक, लैटिन, रूसी, फारसी आदि परिनिष्ठित भाषाएँ मानी जाती हैं । परिनिष्ठित भाषा का क्षेत्र अत्यंत व्यापक होता है ।

2.7. बोली

बोली भाषा की छोटी इकाई है । इसका संबंध ग्राम या मंडल से रहता है । इसमें व्यक्तिगत बोली की प्रधानता रहती है । इसमें घरेलू शब्द और देशज शब्दों का भी प्रभाव रहता है । यह मुख्य रूप से बोलचाल की भाषा होती है । इसमें साहित्यिक रचना

का अभाव रहता है । एक विभाषा में स्थानीय भेदों के आधार पर कई बोलियाँ प्रचलित रहती हैं । इसके लिए फ्राँसीसी शब्द 'पात्वाँ' प्रचलित है ।

2.7.1. पात्वा की चार विशेषताएँ

1. पाँत्वा डायलेक्ट का छोटा व स्थानीय रूप है ।
2. यह साहित्यिक भाषा नहीं होती है ।
3. यह व्याकरण की दृष्टि से असाधु भाषा है ।
4. इसके प्रयोक्ता अशिक्षित या निम्न स्तर के होते हें ।

पात्वा की अधिकांश विशेषताँए बोली में प्राप्त होती हैं । अतः बोली को सामान्य रूप से पात्वा कहा जा सकता है, जैसे - ब्रज, अवधी, भोजपुरी के स्थानीय आधार पर अनेक रूप देखे जाते हैं । भोजपुरी के गाज़ीपुर, बलिया, शाहाबाद आदि जिलों में थोड़े परिवर्तन से जिला स्तर पर विभिन्न रूप मिलते हैं ।

2.8. विभाषा : डॉ.मिताली भट्टाचारजी

विभाषा के संबंध में डॉ.मिताली भट्टाचारजी कहती हैं कि विभाषा का क्षेत्र बोली की अपेक्षा विस्तृत होता है । विभाषा एक प्रांत या सूबे में बोली जाती है । इसका अपना साहित्य भी प्राप्त होता है, यथा, खड़ी बोली, ब्रज बुली, ब्रजभाषा, अवधी, भोजपुरी आदि का । वे अपना स्थान बोली से अधिक बनाती हुई विभाषा स्तर पर प्रचलित होकर भाषा का स्थान प्राप्त कर लेती हैं यथा खड़ी बोली विभाषा होते हुए भी राष्ट्रीय स्तर पर स्वीकृत होकर राष्ट्रभाषा के पद पर अधिष्ठित हुई ।

2.8.1. विभाषा की परिभाषा

किसी सीमित क्षेत्र या भूभाग में जनसाधारण द्वारा बोली जानेवाली उपभाषा को विभाषा कहते हैं, इसके नाम हैं - उपभाषा, क्षेत्रीय भाषा, प्रदेशीय भाषा आदि ।

2.8.2. विभाषा और बोली

विभाषा के क्षेत्र में कई बोलियाँ प्रयुक्त होती हैं । परिनिष्ठित भाषा के क्षेत्र में भी अनेक बोलियों का प्रयोग होता है । ये बोलियाँ अपनी शब्द-उच्चारण-प्रक्रिया, वाक्य-रचना आदि के रूप में अन्य भाषाओं से भिन्न होती हैं । इनका अपना निजी व्यक्तित्व या स्वरूप होता है । उस पर किसी सीमित क्षेत्र की स्पष्ट छाप दिखलाई पड़ती है । हिन्दी की विभिन्न बोलियाँ - ब्रज, अवधी, खड़ी बोली, कन्नौजी, भोजपुरी, मैथिली आदि एक ही भाषा की होते हुए भी एक-दूसरे से भिन्न हैं ।

2.9. बोली और भाषा की स्थानोन्नति

डॉ.कपिलदेव द्विवेदी के शब्दों में - बोली और विभाषा निम्नलिखित कारणों से महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त करती है -

1. जब कोई विभाषा या बोली अपनी सहयोगिनी बोलियों से पृथक् होती है या अकेली शेष रह जाती है, तो उसका स्थान महत्वपूर्ण हो जाता है ।
2. साहित्यिक श्रेष्ठता के आधार पर भाषा का स्थान ऊँचा हो जाता है । सूर-काव्य के कारण ब्रज भाषा का और तुलसी के काव्य ग्रंथों से अवधी का महत्व बढ़ा ।
3. सांस्कृतिक या धार्मिक श्रेष्ठता के आधार पर मथुरा का और राम भक्ति के आधार पर अयोध्या का महत्व बढ़ा । इस प्रकार ब्रज और अवधी को धार्मिक एवं सांस्कृतिक आधार पर बल मिला । आर्य-समाज ने खड़ी बोली को अपने सांस्कृतिक प्रचार का आधार बनाया । अतः उसके प्रचार क्षेत्र में खड़ी बोली को गौरव बढ़ा ।
4. कपिलदेव जी लिखते हैं कि प्रयोक्ताओं का महत्वपूर्ण होना भाषा को महत्ता प्रदान करता है । अंग्रेज और अमरीकी अपनी व्यापारिक उन्नति आदि के कारण विश्व में फैले हुए हैं ।

5. राजाश्रय प्राप्त होने से कोई भी विभाषा 'भाषा' बन जाती है । राजाश्रय के आधार पर अंग्रेजी राजभाषा के पद पर अधिष्ठित हुई है । इसी प्रकार मुगल काल में उर्दू और फारसी को राजभाषा घोषित किया गया था ।

2.9.1. बोली और भाषा में अंतर

बोली और भाषा में अंतर निम्नलिखित प्रकार से किया जा सकता है -

1. भाषा का क्षेत्र बड़ा होता है और बोली का क्षेत्र छोटा ।
2. भाषा में प्रचुर साहित्यक उपलब्ध होता है, बोली में साहित्य नहीं होता है और होता भी है तो अत्यल्प होता है ।
3. बोली भाषा से उत्पन्न है । अतः भाषा और बोली में माता-पुत्री का संबंध होता है ।
4. भाषा शिक्षा का माध्यम होती है, जबकि बोली लोक-साहित्य, लोक-गीत एवं बोल-चाल तक सीमित रहती है ।
5. एक भाषा-जन्य बोलियाँ कुछ अंतर से भिन्न होने पर भी परस्पर बोधगम्य होती हैं ।
6. एक भाषा की अनेक बोलियाँ हो सकती हैं ।

2.9.2. भाषा और बोली की भिन्नता व अभिन्नता

डॉ.कपिलदेव द्विवेदी व डॉ.सरयूप्रसाद कहते हैं कि भाषा और बोली में कुछ लोग विशेष अंतर मानकर उनको एक दूसरे से पृथक् समझते हैं । किन्तु वास्तव में ऐसा नहीं है । कुछ विद्वानों ने साहित्य क्षेत्र, व्यापकता, बोलने वालों की संख्या आदि के आधार पर भाषा और बोली का अंतर माना है । यह एक भ्रांति है । साहित्यिक भाषा के रूप में प्रयुक्त होने से पूर्व हिन्दी की अन्य बोलियों की भाँति खड़ी बोली साधारण बोली मात्र थी । यही खड़ी बोली साहित्यिक हिन्दी की प्रतिनिधि भाषा के ही नहीं, वरन् राष्ट्रभाषा व राजभाषा के गौरव से भी सम्मानित है । बोली मानी

जाने वाली अवधी, ब्रज, मैथिली आदि में उच्च कोटि की साहित्यिक रचना हो चुकी है, जो किसी भी दृष्टि से विश्व की किसी भी परिनिष्ठित भाषा में लिखित साहित्य की तुलना में कम महत्वपूर्ण या प्रतिष्ठित नहीं है । कोई भी भाषा बोली बन सकती है, साथ ही भाषा के रूप में प्रतिष्ठित भाषा बोली रह सकती है । ब्रजभाषा और खड़ी बोली में इसी दृष्टि से कोई भी अंतर नहीं है । यही स्थिति उर्दू, खड़ी बोली, ब्रज भाषा, अवधी आदि की है ।

2.9.3. भाषा और बोली में भिन्नता के तत्व

कतिपय विद्वान भाषा और बोली में कुछ तथ्यों को लेकर अंतर मानते हैं । यह अंतर निम्नलिखित है -

1. कतिपय विद्वानों ने भाषा और बोली का अंतर क्षेत्र के आधार पर माना है । उनका मत है कि बोली का क्षेत्र भाषा की अपेक्षा कहीं अधिक सीमित होता है । भाषा अत्यंत व्यापक व विस्तृत होती है । एक भाषा के अंतर्गत कई बोलियाँ होती हैं । भौगोलिक दृष्टि से भी बोली भाषा की अपेक्षा क्षेत्रीय या स्थानीय होती है ।
2. भाषा व बोली का दूसरा बड़ा अंतर बोधगम्यता है । इस दृष्टि से भी **भाषा की शक्ति व क्षेत्र बोली की अपेक्षा व्यापक और विस्तृत होता है ।** भाषा के द्वारा सूक्ष्म, गहन तथा व्यापक विषयों की जो अभिव्यक्ति संभव है, वह बोली में नहीं हो सकती ।
3. भाषा और बोली का एक अन्य अंतर यह माना जाता है कि **भाषा का प्रयोग साहित्य के अतिरिक्त शिक्षा, शासन तथा अन्य महत्वपूर्ण कार्यों में किया जाता है, जबकि बोली का क्षेत्र मुख्य रूप से दैनिक व्यवहार तक ही सीमित होता है ।**

उपर्युक्त आधार कल्पित है । इसी से विभिन्न भाषा वैज्ञानिकों ने उन दोनों में किसी अंतर को स्वीकार नहीं किया है । प्रो. जार्ज ग्रियर्सन, स्पाचर, ग्रेपेई आदि ने भाषा एवं बोली के बीच कोई निश्चित विभाजन रेखा नहीं मानी है ।

2.9.4. भाषा और बोली के पारस्परिक संबंध एवं अंतर

डॉ.ज्ञानराज काशीनाथ गायकवाड़ का मत

भाषा और बोली में परस्पर संबंध और अन्तर के संबंध में डॉ.ज्ञानराज काशीनाथ गायकवाड़ के विचार इस प्रकार हैं -

1. भाषा अर्थात् मूल भाषा या सामान्य भाषा एक भाषा-समाज के विशिष्ट प्रदेश के भीतर प्रचलित रहती है, इसलिए भाषा व्यापक होती है अर्थात्, उसका एक बड़ा रूप होता है । लेकिन भाषा की तुलना में बोली उसी भाषा का ही एक छोटा रूप होने से वह व्यापक नहीं होती । बोली की व्याप्ति मर्यादित होती है ।
2. बड़ा रूप होने से भाषा का क्षेत्र विस्तृत या विशाल होता है । भाषा पूरे विशिष्ट प्रदेश में बोली जाती है । लेकिन छोटा रूप होने से बोली का क्षेत्र मर्यादित होता है, क्योंकि भाषा जिस पूरे विशिष्ट प्रदेश में बोली जाती है, उसी विशिष्ट प्रदेश के छोटे क्षेत्र में बोलने के लिए बोली का प्रयोग होता है ।
3. भाषा जिस विशाल प्रदेश में बोली जाती है, उसी विशाल प्रदेश के छोटे-छोटे भागों में उसी भाषा के साथ संबंध रखनेवाली अर्थात् उसी भाषा से ही उत्पन्न हुई अलग-अलग बोलियाँ बोलने के लिए उपयोग में लायी जाती हैं । एक बोली में कोई दूसरी बोली या दूसरी भाषा बोलने के लिए प्रचलित नहीं होती, लेकिन एकबोली के छोटे क्षेत्र में एक-दूसरी से मिलती-जुलती कुछ उपबोलियाँ बोलने के लिए उपयोग में आती रहती हैं, जैसे हिन्दी भाषा की 'बुन्देली बोली में लोधान्ती, राठौरी, पँवारी आदि उपबोलियाँ प्रचलित हैं । हिन्दी की खड़ी बोली, ब्रज, अवधी, भोजपुरी आदि बोलियों में इस प्रकार की अनेक उपबोलियाँ प्रचलित हैं ।

4. दो या विभिन्न भाषाओं में बोधगम्यता नहीं होती, जैसे -
हिन्दी भाषा में - लड़का बोला । लड़के बोले ।
मराठी भाषा में - मुलगा बोलला, मुलगे बोलले
अंग्रेजी भाषा में - Boy talked, Boys talked.

यहाँ उदाहरणों से स्पष्ट होता है कि हिन्दी, मराठी और अंग्रेजी इन विभिन्न भाषाओं में परस्पर बोधगम्यता का अभाव होने के कारण, जब तक एक भाषा-भाषी दूसरी भाषा सीख नहीं लेता तब तक उपर्युक्त तीनों भाषाओं के वाक्यों का अर्थ किसी की समझ में नहीं आएगा ।

उसके विरूद्ध एक भाषा की विभिन्न बोलियों में परस्पर बोधगम्यता होने के कारण एक बोली बोलनेवाला दूसरी बोली के वाक्यों का भी अर्थ समझ सकता है, जैसे -

हिन्दी भाषा में - मैं बोला । हम बोले ।
खड़ीबोली में - मैं बोल्ला । हम बोल्ले ।
हरियाणी बोली में - मैं बोल्या । हम बोल्ये ।
कन्नौजी बोली में - हँऊ बोलो । हम बोले
बुन्देली बोली में - मैं बोलो । हम बोले

हिन्दी भाषा की उपर्युक्त बोलियों के वाक्यों का अर्थ खड़ीबोली वाला समझ सकता है, हरियाणी बोली वाला समझ सकता है, कन्नौजी बोली वाला समझ सकता है, बुन्देली बोली वाला समझ सकता है या ब्रज बोली बोलने वाला भी समझ सकता है, क्यों कि एक ही हिन्दी भाषा की बोलियाँ होने के कारण इन बोलियों में परस्पर बोधगम्यता अर्थात् आपस में बोध कराने की योग्यता है । वास्तव में ध्वनि, रूप, वाक्य रचना, शब्द समूह एवं अर्थ की दृष्टि से बोलियों में बहुत अधिक साम्य होता है और अत्यल्प अन्तर होता है ।

5. जिस विशिष्ट प्रदेश में एक भाषा का प्रयोग होता है, उसी भाषा का एक रूप व्याकरण के नियमों पर आधारित

शुद्ध रूप होता है, जिसे 'परिनिष्ठित भाषा' या 'आदर्श भाषा' या 'मानक भाषा' कहा जाता है । राज्य तथा केन्द्र के भी प्रशासनिक व्यवहार, शिक्षण, कानून, समाचार, पत्र, आकाशवाणी, दूरदर्शन, साहित्य आदि के क्षेत्रों में परिनिष्ठित भाषा का प्रयोग मौखिक भाषा तथा 'लिखित भाषा' के रूप में किया जाता है ।

इसके विरूद्ध केवल बोलने के लिए बोली का प्रयोग होता है, जिससे बोली अधिक परिवर्तनशील बनी रहती है ।

बोली का कोई परिनिष्ठित रूप नहीं होता ।

6. व्याकरण के नियमों के साथ बँधकर रहने के कारण भाषा में परिवर्तन के लिए विशेष स्थान नहीं होता ।

   लेकिन बोली व्याकरण के नियमों के साथ बाँधकर रहना पसन्द नहीं करती । वह अपने लिए किसी प्रकार का नियन्त्रण स्वीकार नहीं करती । इसलिए बोली में परिवर्तन के लिए विशेष स्थान होता है ।

7. भाषा में परिवर्तन होता भी है, तो वह बहुत धीरे-धीरे और कम मात्रा में होता है ।

इसके विरूद्ध बोली में परिवर्तन होता है और वह भी जल्दी-जल्दी और बहुत अधिक मात्रा में होता है । परिणाम स्वरूप बहुत अधिक परिवर्तनात्मक विकास के आधार पर कोई बोली भाषा बनने में भी सफल हो जाती है । हिन्दी भाषा की खड़ी बोली के साथ ऐसा ही हुआ है । भारत देश के अर्थात् अपने राष्ट्र के स्वातन्त्र्य आन्दोलन में जन-जागरण के महत्वपूर्ण कार्य के लिए भारतीय नेताओं ने और अन्य लोगों ने भी खड़ी बोली का खुलकर प्रयोग किया । फलतः खड़ बोली ने अनेक महत्वपूर्ण परिवर्तनों के साथ ऐसा विकास कर लिया कि वही खड़ी बोली हिन्दी भाषा बनकर रह गयी और वही हिन्दी परिनिष्ठित भाषा के रूप में स्वतंत्र भारत सरकार की राजभाषा और उत्तर प्रदेश, बिहार, मध्यप्रदेश, हरियाणा, राजस्थान, छत्तीसगढ़ आदि राज्यों की

राज्यभाषा बन गयी है । अतः कोई बोली अत्यधिक विकास के आधार पर भी बन सकती है ।

इस प्रकार परस्पर साम्य के आधार पंर भाषा और बोली आपस में महत्वपूर्ण संबंध रखती हैं, फिर भी कुछ अन्तर या भेद के आधार पर भाषा भाषा बनी रहती है और बोली बोली बनी रहती है ।

2.10. अपभाषा

लोक में व्यवहृत होने पर भाषा में अनेक ऐसे प्रयोग शामिल हो जाते हैं, जिनको शिष्ट समाज में 'विकृत' अथवा 'भ्रष्ट' माना जाता है । इन प्रयोगों में व्याकरण-संबंधी दोष शास्त्रीय नियमों की अपेक्षा, अश्लील शब्द आदि सम्मिलित हैं । इसी प्रकार के प्रयोगों के कारण ही परिनिष्ठित सभ्य भाषा अपभाषा या 'विकृत' भाषा बन जाती है । प्रेम, घृणा, क्रोध, क्षोभ एवं आश्चर्य व्यक्त करने में अपभाषा का व्यवहार अशिक्षित जन करते ही हैं, शिक्षित तथा शिष्ट कहे जानेवाले व्यक्ति भी पीछे नहीं रह जाते ।

2.11. विशिष्ट या व्यावसायिक भाषा

विभिन्न व्यवसायों में विशिष्ट प्रकार की भाषा का प्रयोग होता है । किसी विशिष्ट व्यवसाय में व्यवहृत होने वाली भाषा को ही व्यावसायिक या विशिष्ट भाषा कहा जाता है । किसान, लोहार, बढ़ई, कुम्हार, डॉक्टर, वकील, अध्यापक आदि अपने व्यवसायों में विशेष प्रकार की शब्दावली का व्यवहार करते हैं । इसको 'परिभाषिक अथवा प्राविधिक' भाषा भी कहा जाता है ।

डॉक्टर 'इंजेक्शन लगेगा' 'एक्सरे लिया जायेगा', 'कैप्सूल', 'मिक्स्चर' आदि शब्दों का प्रयोग करते हैं । अस्पतालों की अपनी विशिष्ट भाषा होती है । यही स्थिति कचहरी की है । न्यायालयों में 'मुकद्दमा दायर कर दिया' 'सेसन सुपुर्द होना' जैसी भाषा का प्रयोग होता है ।

2.12. गुप्त भाषा या कूट भाषा

रहस्य, विनोद, मनोरंजन अथवा व्यक्तिगत स्वार्थ-प्रेम के विशेष अर्थ में जिस भाषा का प्रयोग किया जाता है, उस भाषा को गुप्त भाषा या कूट-भाषा कहते हैं । इस प्रकार की भाषा का क्षेत्र अत्यंत सीमित होता है । राजनीति, अपराध-जगत, गुप्तचर, विद्रोह, चोरी-जालसाज़े आदि कार्यों में गुप्त भाषा का व्यवहार किया जाता है ।

परस्पर विनोद तथा मनोरंजन के लिए भी शब्दों को इधर उधर करके अथवा उनके आगे-पीछे करके अथवा उनके आगे-पीछे कुछ शब्द जोड़कर गुप्त भाषा का व्यवहार किया जाता है । उदाहरण के लिए - 'टीरो ओला' (रोटी लाओं)

रघ ओजा (घर जाओ) आदि । अपना पांडित्य प्रदर्शन हेतु अथवा प्रतिपाद्य प्रकट करने हेतु 'कूट-भाषा' का प्रयोग करते हैं । वेदव्यास के 'महाभारत' के कूट श्लोक तथा सूरदास के कूट पद इस दृष्टि से विशेष उल्लेखनीय हैं । उपनिषदों में अनेक स्थलों पर 'इति रहस्य', 'इति-गुह्य', इति परम गुह्यम्' आदि कहा गया है ।

2.13. मिश्रित भाषा

जब कई भाषाओं के शब्दों को जोड़कर किसी नये भाषा रूप का निर्माण किया जाता है तो इसको मिश्रित भाषा कहते हैं । सार्वजनिक स्थलों, विभिन्न व्यवसायों आदि में मिश्रित भाषा का बहुत अधिक व्यवहार किया जाता है । होटलों, कार्यालयों, विद्यालयों, बंदरगाहों तथा रेलवे-स्टेशनों पर मिश्रित रूप या खिचड़ी भाषा की छटा देखते ही बनती है - 'मैंने अपनी सीट बुक करा ली है', 'आप किस प्राविन्स को बिलांग करते हैं' आदि । मिश्रित भाषा का क्षेत्र व्यापक है । भूमध्य सागर के बंदरगाहों में, अरबी, फ्राँसीसी, स्पेनिश, इत्तालवी व अंग्रेज़ी शब्दों के मिश्रण से बनी भाषा मिश्रितभाषा का सुंदर उदाहरण है । इसी प्रकार चीन के बंदरगाहों, 'पिजिन इगलिन' नामक मिश्रित भाषा का खुलकर

VOP - /7 - 148

प्रयोग किया जाता है, विशेष रूप से हाँगकाँग में । मुम्बई, चेन्नई, दिल्ली तथा कोलकत्ता महानगरों की मिश्रित भाषा से हम सब भली भाँति परिचित हैं ही ।

2.14. कृत्रिम भाषा

मिश्रित भाषा का ही एक रूप है - कृत्रिम भाषा । जब भाषा का स्वाभाविक विकास न होकर विशेष प्रयत्न द्वारा विभिन्न भाषाओं के शब्दों को लेकर किसी विशेष भाषा को गढ़ लिया जाता है, तो ऐसी भाषा को कृत्रिम भाषा कहते हैं । डॉ.जयेनहाफ़ ने इसी प्रकार की कृत्रिम भाषा का आविष्कार किया है । उन्होंने इसका नाम 'ऐस्पिरेंतो' रखा है । संसार की भाषाओं के प्रचलित शब्दों को लेकर 'अमेनहाफ' ने इस भाषा को अंतर्राष्ट्रीय के रूप में गढ़ा था हालांकि 'एस्परेंतो' अपने इस उद्देश्य में सफल नहीं हो पाई थी ।

2.15. राष्ट्रभाषा

जिस किसी भाषा के साथ राष्ट्रीय भावना, एकता अथवा गौरव जुड़ जाता है, उसको 'राष्ट्रभाषा' कहते हैं । राष्ट्र भाषा में राष्ट्र की भाँति भावना ही मुख्य होती है । यह राष्ट्र के समस्त निवासियों को एकता के सूत्र में बाँधती है । इसके प्रति राष्ट्र के सभी सदस्य श्रद्धा एवं गौरव का अनुभव करते हैं । यह राष्ट्र की सांस्कृतिक, सामाजिक, साहित्यिक एवं अन्य राजनैतिक विरासत को अपने में समेटे रहती है । संस्कृत संपूर्ण भारत में देश की प्राचीन संस्कृति, इतिहास, सभ्यता, ज्ञान-विज्ञान तथा अन्य विकास की प्रतीक मानी जाती है । स्वतंत्रता-प्राप्ति से पूर्व देश के विभिन्न प्रांतों में बांगला, गुजराती, मराठी, कन्नड, तमिल, तेलुगु, मलयालम, उड़िया, मैथिली, सिंधी, उर्दू आदि अनेक भाषाएँ थीं किंतु हिन्दी को ही 'राष्ट्रभाषा' का ओहदा प्रदान किया गया था । हिन्दी आज संपूर्ण देश की एकता का सबसे प्रबल माध्यम है । यह एक निर्विवाद तथ्य है कि उसमें समस्त राष्ट्र की सांस्कृतिक-सामाजिक और राजनैतिक अभिव्यक्ति होती है । हिन्दी अखिल भारतीय

सम्मेलनों, अधिवेशनों, समाचार पत्रों, पत्र-व्यवहार, व्यवसायों एवं व्यापार के अतिरिक्त परस्पर आदान प्रदान का भी एकमात्र सर्वोधिक प्रयुक्त माध्यम है । भारत के संविधान के अनुसार, तेलुगु, कन्नड आदि मान्यता प्राप्त भाषाएँ राष्ट्रभाषाएँ मानी जाती हैं ।

2.16. राज्यभाषा या राजभाषा

सरकारी काम-काज में प्रयुक्त होने वाली तथा जनता और शासन के बीच मान्यता प्राप्त आदान-प्रदान की भाषा को 'राज्य भाषा' कहते हैं ।

डॉ.नंददुलारे वाजपेयी ने राज्यभाषा उसे कहा है, जो केन्द्रीय और प्रादेशिक सरकारों द्वारा पत्र-व्यवहार, राज्यकार्य और अन्य सरकारी लिखा - पढ़ी के काम में लायी जाये । वास्तव में राज्य-भाषा में शासन या सरकारी मान्यता या आश्रय मुख्य है । समस्त सरकारी काम-काज के अतिरिक्त सरकारी कार्यालयों आदि में राजभाषा का ही प्रयोग किया जाता है । गुप्त काल तक भारत की राजभाषा संस्कृत थी । इसके उपरांत पाली एवं अन्य प्राकृत-अपभ्रंश भाषाओं में सरकारी काम काज होता था । मुस्लिम शासन की भाषा फ़ारसी व उर्दू रही । अंग्रेज़ों के काल में अंग्रेज़ी राजभाषा थी । संविधान सभा ने हिन्दी के साथ साथ अंग्रेज़ी को भी कुछ समय के लिए राजभाषा घोषित किया है । यह दोनों भाषाएँ आज भी राजभाषाएँ बनी हुई हैं । तमिलनाड़ में तमिल, आंध्र में तेलुगु, केरल में मलयालम, बंगाल में बांगला, जम्मू-कश्मीर में कश्मीरी तथा उर्दू, गुजरात में गुजराती आदि राज्य भाषाओं के रूप में प्रयुक्त होती हैं ।

स्विटजरलैंड में तीन भाषाओं जर्मन, फ्राँसीसी तथा इतालवी को राजभाषा की मान्यता प्राप्त है ।

2.16.1. राजभाषा के संबंध में डॉ.ज्ञानराज काशीनाथ के विचार

राजभाषा के संबंध में हिन्दी भाषा विज्ञान परिचय 'ग्रन्थ में डॉ.ज्ञानराज काशीनाथ लिखते हैं - राजभाषा उसे कहते हैं जो

केंन्द्र सरकार की कार्यालयीन भाषा होती है । राजभाषा की निम्नलिखित विशेषताएँ महत्वपूर्ण हैं -

1. स्वतंत्र राष्ट्र की केन्द्र सरकार अपने कार्यालयीन व्यवहार के लिए किसी भाषा के परिनिष्ठित रूप को 'राजभाषा' के रूप में स्वीकार करती है ।

2. राजभाषा परिनिष्ठित भाषा के रूप मे ऐसी भाषा होती है जिसे राष्ट्र के बहुत से शिक्षित लोग समझ सकते हैं और जिसमें बोल सकते हैं तथा लिख सकते हैं ।

3. राजभाषा अपनी मूल भाषा के व्याकरण के नियमों में नियन्त्रित शुद्ध तथा सुव्यवस्थित भाषा होती है, तभी तो राजभाषा परिनिष्ठित भाषा होती है ।

4. स्वतंत्र राष्ट्र का संविधान किसी महत्वपूर्ण परिनिष्ठित भाषा को केन्द्र सरकार के कार्यालयीन व्यवहार के लिए 'राजभाषा' के रूप में स्वीकार कर लेता है । संविधान की मान्यता से ही कोई परिनिष्ठित भाषा 'राजभाषा' बन जाती है, जैसे स्वतन्त्र भारत के संविधान के 17वें भाग में अनुच्छेद (धारा) 343 से 351 के भीतर परिनिष्ठित हिन्दी भाषा को 'राजभाषा' के रूप में स्वीकार कर लिया गया है और उसके विकास तथा प्रचार के लिए अनेक उपायों को स्वीकार कर लिया गया है ।

5. संविधान की मान्यता मिलने के कारण स्वतन्त्र राष्ट्र को केन्द्र सरकार अर्थात् केन्द्रीय शासन अपने प्रशासनिक व्यवहारों में राजभाषा का ही प्रयोग करता है । इस कारण से ही भारत का केन्द्रीय शासन अपने प्रशासनिक व्यवहारों में राजभाषा हिन्दी का प्रयोग करता है ।

6. स्वतन्त्र राष्ट्र के प्रशासनिक व्यवहारों में राजभाषा का उपयोग 'मौखिक भाषा' तथा लिखित भाषा के रूप में भी किया जाता है । उसे लिखित रूप के लिए संविधान के द्वारा ही किसी एक लिपि को स्वीकार किया जाता है । इसलिए स्पतन्त्र भारत के

संविधान ने अपने 17 वें भाग के अनुच्छेद 343(1) में हिन्दी को राजभाषा की मान्यता देते हुए उसके लिखित रूप के लिए 'देवनागरी लिपि' अर्थात् 'नागरी लिपि' को भी 'राष्ट्रलिपि' की मान्यता दी है । इसलिए भारत का संघ शासन अर्थात् केंन्द्र शासन अपने प्रशासनिक व्यवहारों में राजभाषा हिन्दी के लिखित रूप के लिए 'देवनागरी लिपि' का प्रयोग करता है ।

7. राजभाषा का उपयोग राष्ट्र के प्रशासनिक व्यवहारों में तो होता ही है, साथ ही साथ राष्ट्र के कानून के क्षेत्र में, शिक्षण के क्षेत्र में, समाचारपत्र के क्षेत्र में , आकाशवाणी के क्षेत्र में, दूरदर्शन के क्षेत्र में, विज्ञान के क्षेत्र में तथा साहित्य के क्षेत्र में भी राजभाषा का उपयोग किया जाता है । राजभाषा हिन्दी का उपयोग राष्ट्र के प्रशासनिक व्यवहारों के साथ-साथ कानून, शिक्षण, साहित्य, समाचारपत्र, आकाशवाणी, दूरदर्शन, विज्ञान आदि के क्षेत्रों में भी किया जाता है । तभी तो भारत के संविधान के 17 वें भाग अनुच्छेद 348 में उच्चतम न्यायालय, उच्च न्यायालयों, संसद और विधानमण्डलों में प्रस्तुत किये जानेवाले विधेयकों की भाषा के रूप में राजभाषा हिन्दी को स्वीकार किया गया है ।

8. राजभाषा व्याकरण के नियमों से सुनियन्त्रित होती है, इसलिए वह कम परिवर्तनशील होती है ।

9. प्रशासन आदि की सुविधा के अनुसार राजभाषा में अनेक नये पारिभाषिक शब्द उपयोग में लाये जाते हैं, जिससे उसका शब्द भण्डार बढ़ता रहता है । राजभाषा हिन्दी का भी शब्द-भण्डार इसी तरह बढ़ता जा रहा है ।

2.17. अंतर्राष्ट्रीय भाषा

जो भाषा विश्व के विभिन्न देशों के बीच विचार-विनिमय, पत्र-व्यवहार आदि के रूप में व्यवहार में लायी जाती है, उसको 'अंतर्राष्ट्रीय भाषा कहते हैं । सामान्यतः अंग्रेज़ी को ही अंतर्राष्ट्रीय भाषा माना जाता है, क्योंकि अधिकांश अंतर्राष्ट्रीय अधिवेशनों'

सम्मेलनों, पत्र-व्यवहार, समाचार-पत्रों, शिक्षा माध्यम, विचार विनिमय, समाचार के आदान-प्रदानों आदि में अंग्रेज़ी का प्रयोग किया जाता है ।

2.18. साहित्यिक भाषा

सामान्यतः साहित्यिक भाषा, भाषा का वह रूप माना जाता है, जिसमें प्रचुर साहित्य रचा जाता हो । प्रत्येक साहित्यिक भाषा किसी जन-भाषा का ही सँवारा, संस्कृत, सभ्य और चमत्कारपूर्ण रूप हुआ करता है । इस आधार पर कह सकते हैं कि वह सामान्य भाषा-रूप जो सज-संवर कर, निरंतर परिष्कृत, परिमार्जित, सभ्य व चमत्कारपूर्ण होकर साहित्य विशेष में अधिकाधिक प्रयुक्त हुआ करता है, साहित्यिक भाषा कहला सकता है । वस्तुतः ये ही वे अंतर हैं जो उसकी लोक भाषा या सामान्य भाषा से अलग किया करते हैं ।

2.19. व्यक्ति बोली

श्री मेरिओ पेई के शब्दों में 'व्यक्ति बोली' व्यक्ति की आदत और शब्द-चयन संबंधी वैशिष्ट्य के साथ भाषा का वैयक्तिक प्रयोग है । इसको सामान्य भाषा का वैयक्तिक रूपांतरण भी कह सकते हैं । श्री सेस्यूरे ने इसी को 'PAROLE' कहा है । इसके अनुसार माना जाता है कि हर व्यक्ति का अपना-अपना भाषागत वैशिष्ट्य और वैभिन्य हुआ करता है जो उसके बौद्धिक स्तर, वातावरण, स्थिति, भाषाज्ञान एवं प्रयोग क्षमता आदि पर निर्भर रहता है ।

2.20. भाषण विधियों के भेद से भाषा भेद

फ्रोफ़सर ब्लूमफ़ील्ड़ ने भाषण विधियों के भेद से भाषा के पाँच भेद किये हैं -

1. बोलचाल का मानक - यह विशेष सुविधा - प्राप्त वर्ग की बोली है ।
2. साहित्यिक मानक - यह अधिकांशत : औपचारिक

वार्तालापों और लेखादि में मिलता है । यह साहित्यिक स्तरीय भाषा होती है ।

3. प्रांतीय-मानक - यह प्रांतीय स्तर की भाषा है । एक प्रांत से दूसरे प्रांत की भाषा में कुछ भिन्नता रहती है ।

4. उप-मानक - यह स्थानीय भेद से भिन्न होती है । इसमें स्थानीय अंतर बहुत साधारण होता है । यह प्रांतीय से कम विस्तृत क्षेत्र में बोली जानेवाली स्तरीय भाषा है ।

5. स्थानीय बोली - यह न्यूनतम सुविधा प्राप्त वर्ग की बोली है । यह स्थान-विशेष में ही बोली जाती है ।

2.21. प्रो.जॉन केनियन का भाषा वर्गीकरण

प्रो.जॉन केनियन ने भाषण विधि को चंद भागों में बाँटा है । उनमें मुख्य हैं -

1. औपचारिक मानक - यह परिष्कृत लेखन, भाषण एवं विशिष्ट परिस्थितियों में ही प्रयुक्त होती है ।

2. अनौपचारिक मानक-उच्चवर्गीय व्यक्तियों के द्वारा दैनंदिन व्यवहार में प्रयुक्त होता है ।

2.22. साहित्यिक भाषा और जनभाषा का अंतर

साहित्यिक भाषा जनभाषा की अपेक्षा अधिक समृद्ध, गौरवशाली और उत्कृष्ट समझी जाती है । इसलिये इसका महत्व सर्वत्र निरपवाद है, परंतु भाषा-शास्त्री की दृष्टि में यह तथ्य सर्वथा विपरीत है । भाषाशास्त्री के लिए अशिक्षितों, ग्रामीणों, अर्धसभ्यों और असभ्य जातियों की भाषा अधिक महत्वपूर्ण और उपादेय है । भाषा विज्ञान की दृष्टि में साहित्यिक भाषा की अपेक्षा जन-साधारण की भाषा के महत्व के निम्नलिखित कारण हैं -

2.23. जनभाषा अकृत्रिम होती है

डॉ.कपिलदेव द्विवेदी, डॉ.सरयूप्रसाद आदि की मान्यता है कि साहित्यिक भाषा कृत्रिम होती है । रस, छंद, अलंकार, सुंदर

वर्ण-विन्यास उसकी शोभा की वृद्धि करते हैं । उसमें सौंदर्य है, मोहकता है, मादकता है और रोचकता है । परंतु स्वाभाविकता व निसर्ग उज्ज्वलता का अभाव है । जन-भाषा में अकृत्रिमता है । वह भाषा का स्वाभाविक रूप उपस्थित करती है । भाषा - शास्त्री भाषा के स्वाभाविक रूप को देखना चाहता है, जिससे निर्णय कर सके कि भाषा में परिवर्तन और विकास कैसे होता है, विकास की क्या दिशाएँ हैं, ध्वनि-परिवर्तन कैसे होता है, अर्थ-परिवर्तन कैसे होता है, उच्चारण-संबंधी क्या क्या विशेषताएँ लक्षित होती हैं इत्यादि । कृत्रिमता उसकी स्वाभाविकता को नष्ट कर देती है । स्वाभाविकता जन-भाषा में मिलती है, अतः भाषा-शास्त्री के लिये यही विशेष महत्वपूर्ण है ।

2.23.1. जनभाषा में गतिशीलता होती है

जनभाषा में गतिशीलता स्वाभाविक रूप में है, साहित्यिक भाषा में वह गतिशीलता अपेक्षाकृत न्यून है । इसमें स्थिरता अधिक है । बहती हुई नदी प्रतिक्षण परिवर्तन के होते हुए भी नित्य-नूतन है । उसमें शांति है, प्रवाह है शक्ति है और शुद्धता है । साहित्यिक भाषाएँ नदी से निकली हुई धाराएँ हैं, नहरें हैं, जनभाषा बहता नीर है । बहता हुआ पानी शुद्ध होता रहता है ।

2.23.2. जनभाषा में संकीर्णता नहीं होती

जनभाषा में किसी प्रकार की संकीर्णता नहीं होती है । अभीष्ट भाव को व्यक्त करने के लिए जहाँ से शब्द मिलता है, उसे जनभाषा अनायास स्वीकार कर लेती है ।

2.23.3. जनभाषा में सजीवता होती है

जनभाषा सजीव होती है । उसमें निरंतर सक्रियता रहती है । कालक्रम के अनुसार उसमें निरंतर परिवर्तन होता रहता है । इस परिवर्तन को ही भाषाशास्त्री विकास कहते हैं ।

2.23.4. जनभाषा में पूर्वाग्रह दोष नहीं होता

जनभाषा में पूर्वाग्रह का दोष नहीं होता है । साहित्यिक भाषा में यह दोष होता है कि वह कुछ पूवार्ग्रहों को मान्यता देती है, जिससे भाषा का स्वाभाविक रूप अवरूद्ध हो जाता है । जन भाषा में सभी उपयोगी शब्दों का समावेश मिलता है । यदि उनमें मूलरूप से परिवर्तन है, तो वे परिवर्तन की दिशा बताते हैं ।

2.24. मूल-भाषा

सामान्य रूप में तो मूल भाषा भी कृत्रिम या कल्पित भाषा प्रकार की कोटि में आती है और निश्चित रूप से भाषाविदों की देन है । आज के अधिकांश भाषाविदों ने यह स्वीकार किया है कि जिस प्रकार संसार की हर वस्तु का कोई न कोई आदिम रूप रहा होगा, उसी प्रकार विभिन्न भाषाओं की जननी भी रही होगी । कतिपय ऐतिहासिक तथ्यों के आधार पर विश्व की प्रत्येक भाषा का आधार कोई न कोई मूल भाषा मानी जाती है ।

2.25. निष्कर्ष

निष्कर्षतः यह सत्य प्रकाश में आता है कि भाषा के अनेक रूप हैं जिनका निर्माण विभिन्न आधारों एवं कारणों से हुआ करता है । यह सत्य है कि एक ही भाषा एक से अधिक रूपों में भी ग्राह्य हो सकती है अथवा अपनी स्थिति और विशिष्टताओं के फलस्वरूप एकाधिक रूप ग्रहण कर सकती है । इन परिवर्तनों के अनेकानेक कारण भाषाविदों ने बताये हैं, यथा - व्यक्तिगत, सामाजिक व सामान्य कारण । यह सही है कि संसार की सभी भाषाएँ निरंतर बदलती रहती हैं और जितने विभिन्न जनता दल हैं, उतनी भिन्न भिन्न भाषाएँ व्यवहृत हैं ।

रूप प्रकार के आधार पर आदर्श भाषा, बोली, उपभाषा, विकृत भाषा, विशिष्ट भाषा, गुप्त भाषा, मिश्रित भाषा, कृत्रिम भाषा, राष्ट्रभाषा, राजभाषा साहित्यिक भाषा, व्यक्ति बोली, मूल भाषा

आदि भेद बताये जाते हैं । कुछ आलोचकों ने भाषा को काल-भेद, स्थान भेद, देश-भेद, स्तर भेद आदि के आधार पर विभाजित किया है । कुछ भाषाविदों ने चार आधार बताये हैं - यथा 1. इतिहास, 2. भूगोल, 3. प्रयोग, 4. निर्माता । कतिपय विद्वानों ने निम्नलिखित भेद बताये हैं, यथा -

i. परिनिष्ठित / आदर्श भाषा
ii. विभाषा / बोली
iii. अपभाषा / विकृत भाषा
iv. विशिष्ट / व्यावसायिक भाषा
v. गुप्त / कूट भाषा आदि ।

पाश्चात्य विद्वजन भाषाओं के सात भेद मानते हैं, यथा -

i. साहित्यिक मानक भाषा
बोलचाल का मानक रूप
प्रांतीय मानक रूप
उप मानक रूप
स्थानीय बोली
औपचारिक बोली
अनौपचारिक बोली ।

प्रसिद्ध फ्राँसीसी भाषा-वैज्ञानिक ए.सैस्युर भाषा के तीन पक्ष बतलाते हैं -

1. व्यक्तिगत, 2. सामाजिक एवं 3. सामान्य / सर्वव्यापक ।

बोली भाषा की छोटी इकाई है । इसका संबंध ग्राम या मंडल से रहता है । इसमें घरेलू एवं देशज शब्दों का बाहुल्य रहता है । फ्राँसीसी भाषा में बोली को 'पात्वा' कहते हैं जो 'डॉयलेक्ट' का ही स्थानीय छोटा रूप है । डॉ.मिताली भट्टाचारजीं के अनुसार विभाषा का क्षेत्र विस्तृत होता है । विभाषा एक प्रांत या सूबे में बोली जाती है, जिसका अपना साहित्य भी होता है । भाषा

का क्षेत्र बड़ा है तो बोली का क्षेत्र छोटा। बोली भाषा से उत्पन्न है । अतः भाषा व बोली में माता-पुत्री का संबंध है ।

2.26. सारांश

प्रत्येक व्यक्ति की भाषा, उसकी शिक्षा, संस्कृति, व्यवसाय, पर्यावरण आदि के प्रभाव से अवश्य बदलती है । इसके अतिरिक्त भौगोलिक स्थिति, पर्यावरण व राजनीतिक एवं सामाजिक परिवेश से भी भाषाओं के रूप बदल जाते हैं । प्रयोग के आधार पर साहित्यिक भाषा, राजभाषा, राष्ट्रभाषा, शुद्ध - अशुद्ध भाषा, ग्रामीण-नगरीय भाषा आदि भेद बताए गये हैं । रूप-प्रकार के आधार पर आदर्श भाषा, बोली, उपभाषा, विकृत भाषा, विशिष्ट भाषा, गुप्त भाषा, मिश्रित भाषा, कृत्रिम भाषा, राष्ट्रभाषा, राजभाषा, साहित्यिक भाषा, व्यक्ति बोली, मूलभाषा आदि भेद बताये जाते हैं । कुछ आलोचकों ने भाषा के अनेक रूपों को, काल-भेद, स्थान-भेद; देश-भेद, स्तर-भेद आदि के आधार पर विभाजित किया है । चंद आलोचकों ने चार आधार बताये हैं, यथा- i) इतिहास ii) भूगोल iii) प्रयोग iv) निर्माता । कुछ विद्वानों ने निम्नलिखित भेद बताये हैं, जैसे -

i) परिनिष्ठित या आदर्श भाषा
ii) विभाषा / बोली
iii) अपभाषा / विकृत भाषा
iv) विशिष्ट / व्यावसायिक भाषा
v) गुप्त / कूट भाषा
vi) मिश्रित भाषा
vii) कृत्रिम भाषा
viii) राष्ट्रभाषा
ix) राजभाषा

पाश्चात्य मत के अनुसार भाषाओं के सात भेद हैं -

i) साहित्यिक मानक भाषा
ii) बोलचाल का मानक रूप

iii) प्रांतीय मानक रूप
iv) उपमानक रूप
v) स्थानीय बोली
vi) औपचारिक बोली
vi) अनौपचारिक बोली ।

प्रसिद्ध फ्राँसीसी भाषा-वैज्ञानिक ए.सैस्युर भाषा के तीन-पक्ष बतलाते हैं -

i) व्यक्तिगत
ii) सामाजिक एवं
iii) सामान्य या सर्वव्यापक ।

बोली भाषा की छोटी इकाई है । इसका संबंध ग्राम या मंडल से रहता है । इसमें घरेलू एवं देशज शब्दों का बाहुल्य रहता है । फ्राँसीसी भाषा में बोली को पात्वा' बोलते हैं जो 'डायलेक्ट' का ही स्थानीय लघु रूप है । डॉ.मितालीजी के अनुसार विभाषा का क्षेत्र बोली की अपेक्षा विस्तृत होता है । विभाषा एक प्रांत या सूबे में बोली जाती है जिसका अपना साहित्य भी होता है । भाषा का क्षेत्र बड़ा है तो बोली का क्षेत्र छोटा । बोली भाषा से उत्पन्न है । अतः भाषा व बोली में माता-पुत्री का संबंध है । इस घटक के कई अंश ''भाषाविज्ञान और हिन्दी भाषा'' ग्रंथ से लिये गये हैं ।

2.27. बोध प्रश्न

1. भाषा के भिन्न भिन्न प्रकारों पर प्रकाश डालिए ।
2. टिप्पणी लिखिए -
i) भाषा और बोली में अंतर
ii) विभाषा और बोली की स्थानोन्नति ।

2.28. उत्तर के अंश

1. भाषा के विभिनन प्रकार

भाषा परिवर्तन के अनेकानेक कारण हैं, जिनमें शिक्षा, व्यक्तिगत परिवेश, संस्कृति, व्यवसाय, परिवेश आदि सम्मिलित हैं । इनके अतिरिक्त सामाजिक (Social), सामान्य (Common) और व्यक्तिगत (Personal) आदि कारण भी हैं । भाषा भेद या प्रकारों के प्रचलन के अन्य आधार हैं, इतिहास, भूगोल, प्रयोग एवं निर्माता । भाषा के विभिन्न प्रकार -

1. परिनिष्ठित / आदर्श भाषा
2. विभाषा / बोली
3. अपभाषा / विकृत भाषा
4. विशिष्ट / व्यावसायिक भाषा
5. गुप्त / कूट भाषा
6. मिश्रित भाषा
7. कृत्रिम भाषा
8. राष्ट्रभाषा
9. साहित्यिक भाषा
10. राजभाषा
11. व्यक्ति बोली
12. मूल भाषा ।

इनका विवरण अपेक्षित है ।

भाषा के रूप निर्धारण में सहायक तत्व

भाषा के सर्व व्यापक रूप को 'सर्व सामान्य' कहा जाता है । द सैस्थुर ने इसी को लाँग्वेज़ की संज्ञा दी है । भाषा के रूप निर्धारण में कई आधार सक्रिय हैं, यथा -

* इतिहास - संस्कृत, पाली व प्राकृत का ऐतिहासिक रूप निर्धारण में

* भूगोल - जीवित और मृत भाषा निर्धारण में
* निर्माण - स्वाभाविक व कृत्रिम भाषा रूप के निर्धारण में
* स्वरूप - शुद्ध अशुद्ध भाषा के रूप निर्धारण में सहायक है । विवरण अपेक्षित है ।

1. टिप्पणी - बोली व भाषा में अंतर

i) बोली का क्षेत्र भाषा की अपेक्षा कहीं अधिक सीमित है । भाषा अत्यंत विस्तृत क्षेत्र में फैली रहती है ।

ii) भाषा की बोधगम्यता व्यापक एवं विस्तृत होती है । भाषा से सूक्ष्म, गहन व व्यापक विषयों की अभिव्यक्ति संभव है । बोली की बोध गम्यता सीमित होती है

iii) भाषा का प्रयोग साहित्य के अतिरिक्त शिक्षा, शासन तथा अन्य कार्यों में किया जाता है । बोली का प्रयोग इन क्षेत्रों में नहीं होता, होता भी है तो बहुत कम ।

iv) एक भाषा की कई बोलियाँ हो सकती हैं ।

v) एक भाषा से समुद्भूत बोलियाँ कतिपय भेदों के होने पर भी आपस में बोधगम्य होती हैं ।

vi) बोली भाषा से उत्पन्न है । भाषा और बोली में माता व पुत्री का संबंध है । अन्य अंश भी अपेक्षित हैं ।

2. विभाषा एवं बोली निम्नलिखित कारणों से महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त करती हैं -

i) जब कोई बोली / विभाषा अपनी सहयोगिनी बोलियों से पृथक् हो जाती है, वह अकेली महत्वपूर्ण स्थान ले लेती है ।

ii) साहित्यिक श्रेष्ठता के आधार या साहित्यिक रचना के आधार पर भाषा का स्थान उच्च हो जाता है, यथा - सूर काव्य के कारण ब्रज भाषा की महत्ता बढ़ गई है ।

iii) सांस्कृतिक एवं धार्मिक श्रेष्ठता के आधार पर मथुरा का एवं रामभक्ति के आधार पर अयोध्या का महत्व बढ़ गया ।

iv) प्रयोक्ताओं का महत्वपूर्ण होना भाषा को महत्ता प्रदान करता है । उदा. अंग्रेजी अमरीका के कारण महत्वपूर्ण है ।

v) राजाश्रय प्राप्त होने से कोई भी विभाषा, भाषा बन जाती है । मुगल काल में उर्दू व फारसी को राजभाषा घोषित किया गया था ।

2.29. शब्दावली

1.	भाषा समूह	-	Group of Languages
2.	बोली	-	Dialect
3.	भारत ईरानी शाखा	-	Indo-Aryan branch
4.	भाषा तत्व विज्ञ	-	Philologist
5.	वर्ग	-	Class/Sect
6.	अपभाषा	-	Slang
7.	राष्ट्रभाषा	-	National Language
8.	राजभाषा	-	Official Language
9.	संपर्क भाषा	-	Link Language
10.	अंतर्राष्ट्रीय भाषा	-	International Language

2.30. संदर्भ ग्रंथ

अ) ग्रंथ

i) भाषा विज्ञान एवं हिन्दी - सरयू प्रसाद अग्रवाल

ii) भाषा विज्ञान एवं भाषा शास्त्र- डॉ.कपिलदेव द्विवेदी

iii) भाषा विज्ञान - डॉ.भोलानाथ तिवारी

iv) भाषा विज्ञान के सिद्धांत एवं हिन्दी भाषा - डॉ. द्वारिका प्रसाद सक्सेना

v) भाषा शास्त्र की रूप रेखा - डॉ.उदयनारायण तिवारी

vi) भाषा विज्ञान - डॉ.कर्णसिंह
vii) भाषा विज्ञान समीक्षा - प्रो.हेमदेव शर्मा
viii) The History of languages - Henry Sweet
ix) Language - Edward Sapir
x) An introduction to comparitive philology - Dr.P.D. Gune
xi) भाषा रहस्य - डॉ. श्याम सुंदरदास
xii) सामान्य भाषा विज्ञान - डॉ.बाबूराम सक्सेना
xiii) भाषा विज्ञान की भूमिका - डॉ.देवेन्द्रनाथ शर्मा
xiv) भाषा विज्ञान और हिन्दी भाषा ।

NOTES

NOTES

इकाई तीन : भाषा की उत्पत्ति से संबंधित सिद्धांत

इकाई की रूपरेखा

3.0. प्रस्तावना

3.1. उद्देश्य

3.2. भाषा की उत्पत्ति

  3.2.1. मेरिया पेई का कथन

3.3. भाषा-उत्पत्ति के प्रमुख सिद्धांत

  3.3.1. भाषोत्पत्ति सिद्धांतों का वर्गीकरण

  3.3.2. प्रमुख आचार्य

3.4. दैवी सिद्धांत

  3.4.1. संस्कृत मत

  3.4.2. जैन-बौद्ध मत

  3.4.3. ईसाई मत

  3.4.4. इस्लामी मत

  3.4.5. दैवी मत के आचार्य

  3.4.6. दैवी मत की समीक्षा

    3.4.6.1. मिस्र नृप व अकबर के प्रयोग

    3.4.6.2. डॉ.मंगलदेव शास्त्री का तर्क

3.4.6.3. हरडर का तर्क

3.4.6.4. डॉ.श्यामसुन्दरदास का मत.

3.5. मनोभावाभिव्यक्तिवाद

3.5.1. डार्विन का मत

3.5.2. जैस्पर्सन व काण्डलिक का मत

3.5.3. मनोभावाभिव्यक्तिवाद की समीक्षा

3.5.4. बेनफी महोदय का मत

3.6. श्रमपरिहरणमूलकतावाद

3.6.1. श्रमहरणमूलकतावाद की समीक्षा

3.7. अनुकरण सिद्धांत

3.7.1. निरुक्त में अनुकरणवाद

3.7.2. अनुकरण सिद्धांत की समीक्षा

3.7.3. मैक्समूलर का तर्क

3.7.4. मेरियो पेई का तर्क

3.7.5. अनुकरण सिद्धांत का स्थान

3.7.6. अनुकरण सिद्धांत के संबंध में डॉ.ज्ञानराज काशीनाथ गायकवाड़ के विचार

3.7.7. अनुकरण सिद्धांत के विरुद्ध आपत्तियाँ

3.8. अनुरणनमूलकतावाद

3.8.1. अनुरणनमूलकवाद की समीक्षा

3.9. धातु सिद्धांत

3.9.1. पाणिनि का 'धातोः सूत्र'.

3.9.2. धातु प्रधान भाषाएँ

3.9.3. धातु सिद्धांत समीक्षा : डॉ.मितालीजी का मत

3.9.3.1. डॉ.तारापुरेवाल का मत

3.9.3.2. धातु कल्पनाजन्य है

3.9.3.3. धातु-सिद्धांत के विरुद्ध एक महत्वपूर्ण आपत्ति

3.9.3.4. धातु सिद्धांत के संबंध में डॉ.ज्ञानराज काशीनाथ गायकवाड़ के विचार

3.10. संपर्क सिद्धांत

3.10.1. संपर्क सिद्धांत की समीक्षा

3.11. संकेत सिद्धांत

3.11.1. संकेत सिद्धांत के प्रमुख प्रवर्तक

3.11.2. जोहानसन के विचार

3.11.3. संकेत सिद्धांत की समीक्षा

3.12. निर्णय सिद्धांत

3.12.1. निर्णय सिद्धांत की समीक्षा

3.13. विकासवाद

3.13.1. स्वीट के विचार

3.13.2. विकासवाद की समीक्षा

3.14. समन्वय सिद्धांत

3.14.1. औपचारिक उत्पत्तिवाद

3.14.2. टा-टा सिद्धांत

3.14.3. संगीत सिद्धांत

3.14.3.1. संगीत सिद्धांत : डॉ.ज्ञानराज काशीनाथ गायकवाड़ के विचार

3.15. निष्कर्ष

3.16. सारांश

3.17. बोध प्रश्न

3.18. उत्तर के अंश अभ्यास के प्रश्नों के संबंध में

3.19. शब्दावली

3.20. संदर्भ ग्रंथ एवं निबंध

3.0. प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में आप भाषा की उत्पत्ति से संबंधित विभिन्न सिद्धांतों का ज्ञान अर्जित करेंगे, यथा-

i. दैवी सिद्धांत
ii. धातु सिद्धांत
iii. अनुकरणमूलकतावाद
iv. मनोभावाभिव्यक्ति वाद
v. श्रमपरिहरणमूलकता वाद
vi. अनुरणनमूलक सिद्धांत
vii. संकेत सिद्धांत
viii. संपर्क सिद्धांत
ix. निर्णय सिद्धांत
x. विकासवाद
xi. समन्वय सिद्धांत

भाषा की उत्पत्ति के संबंध में इदमित्थ कहकर कोई विचार व्यक्त कर नहीं सकते । विभिन्न मनीषियों ने भिन्न भिन्न मत व्यक्त किये हैं । कोई धातु सिद्धांत का प्रतिपादक है तो और कोई संकेत सिद्धांत का । प्रस्तुत इकाई में इन मतों का विवरण प्रस्तुत करते हुए उनकी समीक्षा भी की जाती है और यह सिद्ध किया जाता है कि इनमें से कोई सिद्धांत भाषा की उत्पत्ति का रहस्य समुद्घटित करने में सक्षम नहीं है । 'स्वीट' द्वारा प्रतिपादित समन्वय सिद्धांत भी अपने लक्ष्य में सफल नहीं हुआ । भाषा की उत्पत्ति के संबंध में इतना अवश्य कहा जा सकता है कि विभिन्न सिद्धांतों के तत्वों के समन्वय से भाषाएँ प्रस्तुत रूप प्राप्त कर सकी हैं । विकास की अनगिनत मंजिलें पार करती हुई ये भाषाएँ अंततोगत्वा प्रस्तुत रूप में विद्यमान हैं । जिस प्रकार चंद नदियों व नालों के पानी के मिलने से एक महानदी बनती है, उसी प्रकार भाषा विभिन्न प्रक्रियाओं से उपलब्ध शब्दों के जल से संभरित होकर महास्रवंति का बृहदाकार प्राप्त करती है । भाषा के इस अद्भुत रूप को

देखकर कोई भी व्यक्ति यह मानने के लिए लालायित हो जायेगा कि वह भगवान की सृष्टि है । वस्तुतः भाषा समाज की सृष्टि है । आस्तिक कह सकते हैं कि यह परमात्मा का वरदान है । वैज्ञानिक इसे नहीं मानते । भाषा संस्कृति, सभ्यता, कला आदि की तरह धीरे धीरे अपना विकास करती हुई अद्यतन दशा तक आयी है ।

आरंभ में अदृश्य शक्ति की प्रेरणा से मानव के मुँह से श्रद्धा के शब्द निकले होंगे । तत्पश्चात् पीड़ा व प्रमोद के समय उसके वदन से ओह, हाय, आह, वाह जैसे मनोभावाभिव्यंजनापरक शब्द निःसृत हुए होंगे । फिर श्रमपरिहरणमूलक यथा यो-हे-हो, छियो-छियो शब्द ध्वनित हुए होंगे । तदुपरांत उसने चेतन प्रकृति का अनुकरण करते हुए काँव-काँव, म्याऊँ-म्याऊँ शब्दों का अनुकरण करते हुए अपने मन व मस्तिष्क में उन्हें भर लिया होगा । इसी प्रकार धातुओं से उसने चंद शब्द बनाये होंगे । फिर संपर्क से कुछ शब्द गठित हुए होंगे । संकेत के बल पर भी पा-पा कहते हुए पानी शब्द गठित किया होगा । फिर निर्णय सिद्धांत का सहारा लेकर किसी विषय अथवा अर्थ के लिए कोई शब्द निश्चित किया होगा । विकास के विभिन्न चरणों में और चंद शब्द बनाये होंगे । सबका समन्वय करते हुए भाषा के उद्यान में शब्दों के नये फूल पौधे उगाये होंगे । इस प्रकार अंत में भाषा का प्रस्तुत रूप बन गया होगा । ये सभी कपोल कल्पित हैं । भाषा को कोई स्वयंभू मानता है । मानव की उत्पत्ति के समान भाषा की उत्पत्ति भी रहस्यात्मक है । ''भाषा विज्ञान और हिन्दी भाषा'' ग्रंथ के कई अंश इस इकाई में गृहीत हैं ।

3.1. उद्देश्य

पाठकों को भाषा की उत्पत्ति के प्रमुख सिद्धांत से अवगत कराना ही इस इकाई का मुख्य उद्देश्य है । अनादि काल से भाषा की उत्पत्ति के संबंध में भाषावैज्ञानिक सोचते आ रहे हैं । समय के साथ-साथ अनेक भारतीय एवं पाश्चात्य भाषाशास्त्रियों ने इस समस्या का समाधान ढूँढने हेतु गहन अध्ययन किया है ।

अध्ययन के पश्चात् मैक्समूलर, मेरियो पेई, ब्लूमफ़ील्ड़ ,आदि प्रमुख भाषाविदों ने इस क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान देते हुए अनेक सिद्धांतों का प्रणयन किया है ।

प्रस्तुत इकाई में भाषा की उत्पत्ति के संबंध में प्रचलित विभिन्न सिद्धांतों व तत्वों से पाठकों को अवगत कराते हुए भाषा रूपी समुद्र के निर्माण की विभिन्न प्रक्रियाओं की जानकारी दी जा रही है । भाषा की उत्पत्ति के संबंध में प्रचलित दैवी सिद्धांत, धातु सिद्धांत, अनुकरणमूलक सिद्धांत, संकेत सिद्धांत, निर्णय सिद्धांत, संपर्क सिद्धांत, संगीत सिद्धांत, विकासवाद, प्रतिभा सिद्धांत आदि की जानकारी प्रदान करना प्रस्तुत इकाई का प्रधान उद्देश्य है । भाषा मानव द्वारा निर्मित सर्वश्रेष्ठ अमूल्य संपत्ति है । भाषा के बिना मानव पुनः पशु दशा तक अवनत हो जाता है । इस अमूल्य भाषा रूपी संपत्ति की उत्पत्ति का रहस्य जानने की जिज्ञासा को प्रस्तुत घटक शांत व सफल बनाता है ।

3.2. भाषा की उत्पत्ति

भाषा की उत्पत्ति के संबंध में अनादि काल से भाषा वैज्ञानिक सोचते आ रहे हैं । आज भी यह प्रश्न मात्र ही नहीं, वरन् कौतूहल भी बना हुआ है ।

3.2.1. मेरिया पेई का कथन

मेरिया पेई लिखते हैं कि सभी विद्वानों का कथन है कि मानव की बोली की उत्पत्ति की समस्या अभी तक नहीं सुलझ सकी है । भारतीय एवं पाश्चात्य मनीषियों ने इस समस्या को हल करने के लिए विस्तार से अध्ययन किया है । औदुम्बरायण, यास्क, कृष्ण द्वैपायन व्यास, व्याडि, पतंजलि, भर्तृहरि आदि के नाम इस संबंध मे विशेष उल्लेखनीय हैं । पाश्चात्य विद्वानों में लाइब्निज, मैक्समूलर, ब्लूमफील्ड़, वांन्द्रियैज़, मेरियो पेई, बुलाईश्वर आदि ने इस क्षेत्र में विशेष कार्य किया है ।

3.3. भाषा की उत्पत्ति के प्रमुख सिद्धांत

भाषा की उत्पत्ति के संबंध में प्रचलित सिद्धांत ये हैं -

i. दैवी सिद्धांत
ii. धातु सिद्धांत
iii. अनुकरणमूलकता वाद
iv. मनोभावाभिव्यक्ति वाद
v. श्रमपरिहरणमूलकता वाद
vi. अनुरणनमूलक सिद्धांत
vii. संकेत सिद्धांत
viii. संपर्क सिद्धांत
ix. निर्णय सिद्धांत
x. विकासवाद का सिद्धांत
xi. संगीत सिद्धांत
xii. प्रतिभा सिद्धांत
xiii. समन्वय सिद्धांत

भाषा मानव की सार्वभौम संपत्ति है जो अन्य प्राणियों को अप्राप्य है । भाषा विज्ञान का अध्ययन करते समय सहज ही हमारे मस्तिष्क पर यह प्रश्न अंकित हो जाता है कि भाषा की उत्पत्ति कैसे हुई और मानव ने सबसे पहले भाषा का ज्ञान किस प्रकार प्राप्त किया ।

भाषा की उत्पत्ति के सिद्धांत - भाषा की उत्पत्ति के संबंध में प्रकाश डालते हुए विद्वानों ने ध्वनि, शब्द, वाक्य, रूप, अर्थ एवं भाषा की उत्पत्ति से संबंधित जो मत प्रस्तुत किये हैं, वे भाषा की उत्पत्ति के सिद्धांत कहलाते हैं । भाषा वैज्ञानिकों ने भाषा की उत्पत्ति पर कम और भाषा के अंगों की उत्पत्ति पर अधिक प्रकाश डाला है ।

3.3.1. भाषोत्पत्ति सिद्धांतों का वर्गीकरण

ये सिद्धांत दो भागों में विभाजित किये जा सकते हैं -
1. प्रत्यक्ष मार्ग सिद्धांत 2. परोक्ष मार्ग सिद्धांत ।

प्रत्यक्ष मार्ग सिद्धांत

ये सिद्धांत सीधे भाषा के मूल उद्‌गम को प्रकाश में लाने का प्रयत्न करते हैं ।

परोक्ष मार्ग सिद्धांत

परोक्ष मार्ग के सिद्धांत सीधे भाषा के जन्म पर दृष्टिपात न कर, भाषा के वर्तमान रूप का अध्ययन करते हुए धीरे-धीरे उसके मध्यकालीन रूप, प्राचीनकालीन रूप एवं मूल रूप का समुद्‌घाटन करते हैं । यहाँ प्रत्यक्ष मार्ग के सिद्धांतों का विवेचन किया जाता है ।

भाषा की उत्पत्ति के संबंध में अद्यावधि कृत अध्ययन

निम्नसूचित धार्मिक ग्रंथों में भाषोत्पत्तिपरक विचार उपलब्ध हैं -

1. वेद - ऋग्वेद
2. प्राचीन विधान : बाइबिल
3. कुरान
4. जैन धर्म ग्रंथ
5. बौद्ध धर्म ग्रंथ ।

3.3.2. प्रमुख आचार्य

निम्न सूचित आचार्यों ने भाषोत्पत्ति पर प्रकाश डाला है -

भारतीय

1. इंद्र-ऐंद्र संप्रदाय
2. यास्काचार्य - (ईसा पूर्व 8वीं सदी) - निरुक्त
3. पाणिनि - (ईसा पूर्व 350-250) अष्टाध्यायी (धातु उत्पत्ति)
4. कात्यायन - वार्तिक
5. महर्षि पतंजलि (ई.पू.150) - महाभाष्य

पाश्चात्य : प्राचीन

1. सुकरात - दिव्य मत

2. प्लेटो - धातु सिद्धांत (अनुरणन)
3. अरस्तू - अनुकरण

पाश्चात्य : आधुनिक

अ. 18 वीं सदी

1. हार्डर - अनुकरण मूलकतावाद, बाउ बाउ सिद्धांत
2. कांडिलक - मनोभावाभिव्यंजकतावाद, पूहपूहवाद
3. रूसो - निर्णय सिद्धांत

अन्य विद्वान - गियांब टिस्टा, ब्रासस

आ. 19वीं सदी

न्यायर - श्रमपरिहरणमूलकतावाद, यो-हे-हो-वाद
याकोब ग्रिम (1785-1863) - देवभाषा व्याकरण - ध्वनि उत्पत्ति (विकास पर कम ध्यान)
राये - इंगित सिद्धांत
डार्विन - विकासवाद, इंगित सिद्धांत, संगीत सिद्धांत
हम्बोल्ट - (1767-1835) - तुलनात्मक अध्ययन
अगस्त इलायरवर (1821-1868) - भाषा भौतिक वस्तु है, भारोपीय मूल भाषा-निर्माण
ह्विटनी (1827-1894) - मैक्समूलर का विरोध,मानवीय विकासवाद
निकोलयमैदविक - दिव्योत्पत्ति विरोध
ब्रेडस्डार्क (1821) - भाषा विकास, सहज विकास
वॉप - आकृति रूप, विकास विवेचन
रिचर्ड - इंगित सिद्धांत
रेनन - अनुकरणमूलकतावाद का विरोध
हेमैन स्टाइन्थाल (1825-1899) - हम्बोल्ट के शिष्य - धातु सिद्धांत पोषक मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया पर बल
जेस्पर्सन - संगीत सिद्धांत

हेज - अनुरणन, डिंग-डांगवाद
स्पेन्सर - संगीत सिद्धांत
फ्रेडरिक मैक्समूलर (1823-1900) - भाषा उद्‌गम, भौतिक अनुरणन सिद्धांत, अनुकरण सिद्धांत का विरोध
स्वीट - प्रतीकात्मक उत्पत्ति, समन्वित विकासवाद
फर्रार - अनुकरणमूलकतावाद व मनोभावाभिव्यंजकतावाद
अन्य विद्वान - रेनाल्ड, अर्नेस्ट, डाइगर, मार्टीन, टेलर ।

इ. 20वीं सदी के विद्वान्

हडसन - संगीत सिद्धांत का विरोध
रेवेज - संपर्क सिद्धांत का प्रतिपादक
जोहान्सन - इंगित सिद्धांत
कार्ल ब्रुगमान (19-20 सदी) - भारोपीय भाषाएँ .....उत्पत्ति चर्चा
अन्य विद्वान-वुण्ट, होनिंस्वाल्ड, बर्नार्डशा, हम्फरी, समर फेल्ट ।

ई. भारतीयः आधुनिक

डॉ. सुनिति कुमार चटर्जी
डॉ. गौरीशंकर ओझा
डॉ. श्यामसुन्दर दास
डॉ. भोलानाथ तिवारी
डॉ. बाबूराम सक्सेना
डॉ. तारापुरेवाल
डॉ.कपिलदेव द्विवेदी
डॉ.भोलाशंकर व्यास
डॉ.बी.कृष्णमूर्ति
डॉ.गुण्टूरु शेषेंद्र शर्मा
डॉ.मंगल देव शास्त्री
डॉ.राधाकृष्ण मुदलियार
डॉ.मिताली भट्‌टाचारजी
डॉ.लक्ष्मी नारायण शर्मा

3.4. दैवी सिद्धांत

''भाषा विज्ञान और हिन्दी भाषा'' ग्रन्थ के प्रणेता लिखते हैं -

विश्व की विभिन्न वस्तुओं की रचना का मूल कारण ईश्वर माना जाता है । भाषा की उत्पत्ति के प्रश्न को भी ईश्वर के साथ जोड़ा जा रहा है । इस मत के प्रतिपादकों के अनुसार मानव दैवी प्रेरणा से बोलने लगता है । भाषा मानव को ईश्वर के अन्य वरदानों की भाँति एक सहज कृपा का ही प्रसाद है ।

3.4.1. संस्कृत मत

वैदिक पंडित गण संस्कृत को देववाणी कहते हैं । उनके अनुसार अपौरुषेय एवं अनादि वेदों की भाषा भगवान के मुँह से ही निःसृत हुई है । वेदों की भाषा ही जगत् भर की समस्त भाषाओं की जननी है । ऋग्वेद में स्पष्ट शब्दों में भाषा की उत्पत्ति दैवी घोषित की गई है । लौकिक संस्कृत के लिए व्याकरण रचना करनेवाले महर्षि पाणिनि के चौदह सूत्र माहेश्वर सूत्र कहलाते हैं और उनकी उत्पत्ति शिवजीके डमरू से मानी जाती है ।

3.4.2. जैन-बौद्ध-मत

संस्कृत परम्परा की भाँति जैन अर्ध-मागधी को विश्व की सभी भाषाओं की जननी मानते हैं । बौद्धों के मत में मागधी का पाली रूप दैवीय तथा विश्व की आदि भाषा है ।

3.4.3. ईसाई मत

विदेशों में भी भाषा को दैवी माना गया है । कैथोलिक ईसाई हिब्रू भाषा को संसार की मूल भाषा बताते हैं, क्योंकि इसमें ही उनका धार्मिक ग्रन्थ प्राचीन विधान लिखा गया है ।

3.4.4. इस्लामी मत

मुसलमानों के अनुसार सर्व प्रथम खुदा ने पैगम्बर को अरबी

भाषा सिखाई थी । इस प्रकार उनके मत में अरबी ही विश्व की मूल भाषा है ।

3.4.5. दैवी मत के आचार्य

आज भी बहुत से विद्वान भाषा की उत्पत्ति दैवी प्रेरणा से मानते हैं । इनमें प्रो.राधाकृष्ण मुदलियार, डॉ.मिताली भट्टाचारजी, श्लेगल, मैथनर आदि के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं ।

3.4.6. दैवी मत की समीक्षा

डॉ.सरयू प्रसाद जी के शब्दों में आधुनिक वैज्ञानिक युग के मनीषी भाषा की उत्पत्ति दैवी या ईश्वरीय नहीं मानते हैं । यह केवल अंधविश्वास है । यह सभी वस्तुओं की रचना ईश्वर के साथ जोड़ देने की प्रवृत्ति का ही परिणाम है । इस सिद्धांत की कई त्रुटियाँ हैं ।

3.4.6.1. मिस्र नृप व अकबर के प्रयोग

मिस्र के राजा समटिकस तथा मुगल सम्राट अकबर के प्रयोगो से यह स्पष्ट रूप से सिद्ध हो चुका है कि बालक जन्म से कोई भाषा लेकर संसार में नहीं आता । आँख, कान, नाक, मुँह आदि की भाँति भाषा जन्मजात नहीं होती । हर बालक को उसे सीखना है । लोगों का कहना है कि केवल मानव को ही ईश्वर ने एक विशेष प्रकार का वाग्यन्त्र दिया है जिससे वह इच्छित ध्वनियों का उच्चारण कर पाता है । यह भ्रामक है ।

3.4.6.2. डॉ.मंगलदेव शास्त्री का तर्क

डॉ.मंगलदेव शास्त्री के अनुसार भाषा लेखन कला, कविता, चित्रविद्या, वास्तुविद्या आदि अन्यान्य कलाओं की तरह धीरे-धीरे सभ्यता की उन्नति के साथ-साथ उन्नत होती है ।

3.4.6.3. हरडर का तर्क

पाश्चात्य विद्वान हरडर का तर्क है कि यदि भाषा ईश्वरीय देन होती तो उसे तर्कयुक्त, शुद्ध एवं युक्तिपूर्ण होना चाहिए था ।

3.4.6.4. डॉ.श्यामसुन्दरदास का मत

डॉ.श्याम सुन्दर दास भी इस सिद्धांत का विरोध करते हुए कहते हैं कि केवल इस दृष्टि से यह मत सार्थक माना जा सकता है कि भाषा मनुष्य की ही विशेष सम्पत्ति है । अन्य प्राणियों को वह नहीं मिली है ।

3.5. मनोभावाभिव्यक्तिवाद

मनोभावाभिव्यक्तिवाद को मनोभावाभिव्यंनावाद तथा आवेग सिद्धांत भी कहते हैं । इस मत के समर्थकों का यह विचार है कि मनोवेगों की तीव्र अवस्था में मानव मुख से कतिपय ध्वनियाँ स्वतः निकलती हैं । सुख, उल्लास, दुःख, पीड़ा, आश्चर्य आदि अवस्थाओं में उत्पन्न होनेवाले आह, ओह, आई, ओई, अरे, उई, हाय, यूह आदि शब्दों से ही भाषा का विकास हुआ है ।

3.5.1. डार्विन का मत

विकासवाद के जनक डार्विन ने विस्मयादिबोधक शब्दों की उत्पत्ति के लिए शारीरिक कारणों को ही उत्तरदायी माना है । इस सिद्धांत के अनुसार प्रारंभ में मनुष्य विचारप्रधान प्राणी न होकर अन्य जीवों की भाँति भावप्रधान था । इसीलिए उसके मुँह से भावावेश की स्थिति में ओह, अरे, अह, धत्, आदि शब्द अनायास ही निकल पड़ते हैं ।

3.5.2. जैस्पर्सन व काण्डलिक का मत

जैस्पर्सन, काण्डलिक आदि विद्वानों के अनुसार मनुष्य क्या, पशुओं में भी यह प्रवृत्ति दृष्टिगत होती है । वे हर्ष, उल्लास, भय,

शोक, आश्चर्य आदि मनोभावों के समय, आह, उह, छीह आदि स्वाभाविक ध्वनियों को निःसृत करते हैं । इन्हीं ध्वनियों के आधार पर छींकना, खाँसना, फटकारना, धिक्कारना, धत्, पुकारना आदि शब्दों का जन्म हुआ है ।

3.5.3. मनोभावाभिव्यक्तिवाद की समीक्षा

पूर्ववर्ती सिद्धांत की भाँति मनोभावाभिव्यक्तिवाद भी भाषा की उत्पत्ति की समस्या को हल करने में असमर्थ है । इस सिद्धांत के विरूद्ध कई महत्वपूर्ण आपत्तियाँ उठती हैं । धातु-सिद्धांत तथा अनुकरण सिद्धांत की तरह यह सिद्धांत भी किसी भाषा के थोडे से शब्दों की उत्पत्ति तक ही सीमित रह जाता है, क्योंकि किसी भाषा में भावावेश की दशा में स्वतः उत्पन्न होनेवाले शब्दों की संख्या चालीस पचास से अधिक नहीं होगी । ऐसे शब्द भिन्न भिन्न भाषाओं में अलग अलग हैं । बेनफी के अनुसार ये शब्द भाषा के अंग ही नहीं हैं ।

3.5.4. बेनफी महोदय का मत

इस संबंध में बेनफी महोदय का यह विचार सर्वथा उपयुक्त प्रतीत होता है कि ऐसे शब्द केवल वहाँ प्रयुक्त होते हैं, जहाँ बोलना संभव नहीं होता । इस प्रकार यह तो भाषा ही नहीं है 1

3.5.5. डॉ.मिताली भट्टाचारजी का मत

मनोभाव के शब्द वैभिन्य के संबंध में

डॉ.मिताली भट्टाचारजी के शब्दों में मनोभाव की तीव्रतम अवस्था में उत्पन्न होनेवाले शब्द भिन्न-भिन्न भाषाओं में भिन्न-भिन्न पाये जाते हैं । शोक की दशा में संसार के सभी जीव न तो हाय-हाय कहते हैं और न ओह ही कहते हैं, न आनंद अथवा उल्लास में वह ओह ओह कहते हैं । अतः यह सिद्धांत अपने उद्देश्य में एकदम असफल है ।

3.6. श्रमपरिहरणमूलकतावाद

'भाषा विज्ञान और हिन्दी भाषा ग्रन्थ में ठीक ही लिखा गया है कि मानव का यह सहज स्वभाव है कि कठिन परिश्रम करते समय वह अपनी थकान कम करने हेतु अनेक प्रकार की ध्वनियाँ मुख से निकाला करता है । ऐसा करने से उसका ध्यान श्रम की ओर से थोड़ी देर के लिए हट जाता है तथा उसे कार्य करने की प्रेरणा भी मिलती है ।

बोझा उठानेवाले श्रमिक, धोबी, मल्लाह तथा अन्य शारीरिक श्रम करनेवाले मनुष्य एक विशेष प्रकार की ध्वनि का उच्चारण करते हैं । धोबी लोग कपड़े धोते समय ''छियो-छियो'' की आवाज़ करते हैं, मल्लाह चप्पू चलाते समय ''यो हे हो'' की ध्वनि किया करते हैं ।

मनुष्य की इस प्रवृत्ति को आधार मानकर नुइरे आदि भाषा-वैज्ञानिकों ने भाषा की उत्पत्ति श्रमपरिहरणमूलक शब्दों से मानी है । उनका मत है कि मानव पहले इस प्रकार की स्वाभाविक ध्वनियों का उच्चारण करता रहा होगा । बाद में इससे भाषा का और विकास हुआ । इस सिद्धांत का अन्य नाम है - ''यो-हे-हो वाद'' ।

3.6.1. श्रमहरणमूलकतावाद की समीक्षा

यह सिद्धांत भी भाषा की उत्पत्ति के प्रश्न का समाधान करने में अक्षम है । अपने पूर्ववर्ती सिद्धांतों के समान यह सिद्धांत भी महत्वपूर्ण नहीं है, क्योंकि श्रमपरिहरण के लिए जिन ध्वनियों का उच्चारण किया जाता है, वे सर्वथा निरर्थक हुआ करती हैं ।

3.7. अनुकरणसिद्धांत : हरडर का मत

अनुकरण मानव की स्वाभाविक प्रवृत्ति है । हरडर का विचार है कि आदिकाल में मनुष्य जड़ तथा चेतन प्रकृति की

प्राकृतिक ध्वनियों का अनुकरण करता रहा होगा । बाद में ये ही ध्वनियाँ विभिन्न पदार्थों तथा जीवों के प्रतीक बन गई होंगी । इन्हीं ध्वनि संकेतों से अन्य शब्द बन गये होंगे । संसार की समस्त भाषाओं में इस प्रकार के शब्द दृष्टिगत होते हैं, जैसे स्यायु, कोयल, घुग्घू, कांव-कांव, कुक्कुट, भौंकना, हिनहिनाना, Thunder, Burzz, tut-tut आदि ।

3.7.1. निरूक्त में अनुकरवाद

निरूक्त में भी इस प्रकार के अनेक शब्दों की व्युत्पत्ति के संबंध में संकेत किया गया है, जिनकी व्युत्पत्ति पक्षियों की ध्वनियों के आधार पर की गई है । वायु का सर-सर बहना, पक्षियों का मर्मर स्वर करना, पानी का झर-झर करके गिरना आदि शब्द इसी प्रकार के हैं । इस सिद्धांत के अन्य नाम हैं - Bow Bow Theory, शब्दानुकरणवाद, Ecohic Theory, Onomotopoetic Theory.

3.7.2. अनुकरण सिद्धांत की समीक्षा

डॉ.सरयू प्रसाद के शब्दों में

मानव संपूर्ण सृष्टि का सबसे विकसित प्राणी है । उसमें अनुकरणशीलता अवश्य है । किन्तु कोरा अनुकरण ही भाषा के विकास के लिए उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता । कतिपय अनुकरणात्मक शब्दों के आधार पर ही भाषा की उत्पत्ति मानना निराधार है ।

3.7.3. मैक्समूलर का तर्क

मैक्समूलर के अनुसार यह सिद्धांत मुर्गियों की कुड़क और बत्तखों की कै-कै तक है । किन्तु इस मुर्गीखाने से आगे एक ऐसी सुदृढ़ प्राचीर है और हम बहुत ही शीघ्र इस बात को जान लेते हैं कि इसके दूसरे छोर से भाषा का प्रारंभ होता है ।

3.7.4. मेरियो पेई का तर्क

मेरियो पेई अनुकरण सिद्धांत की आलोचना करते हुए लिखते हैं कि इस सिद्धांत को इसलिए स्वीकार नहीं किया जा सकता कि इस तरह के शब्द विभिन्न भाषाओं में एक से नहीं है। अंग्रेजी, फ्रांसीसी तथा इत्तालवी में भिन्न-भिन्न शब्दों का प्रयोग करते हैं ।

3.7.5. अनुकरण सिद्धांत का स्थान

अनुकरण सिद्धांत की इन त्रुटियों को देखकर ही इस सिद्धांत के प्रतिपादक श्री हरडर ने स्वयं ही इसका परित्याग कर दिया । भाषा के विकास तथा उसकी समृद्धि में यह सिद्धांत अवश्य महत्वपूर्ण है ।

3.7.6. अनुकरण सिद्धांत के संबंध में डॉ.ज्ञानराज काशीनाथ गायकवाड़ के विचार

अनुकरण सिद्धांत के संबंध में डॉ.ज्ञानराज गायकवाड लिखते हैं कि विद्वानों ने अनुकरणवाद का समर्थन करते हुए माना है कि भाषा की उत्पत्ति अनुकरणमूलक शब्दों के आधार पर हुई है । इसके लिए उन्होंने तीन प्रकार के उपवादों या उप सिद्धांतों को स्वीकार किया है - (अ) ध्वन्यात्मक अनुकरणवाद, (आ) अनुरणनात्मक अनुकरणवाद और (इ) दृश्यात्मक अनुकरणवाद ।

(अ) ध्वन्यात्मक अनुकरणवाद या भौं-भौं सिद्धांत

इस वाद को हिन्दी में अनुकरणमूलकतावाद, शब्दानुकरणवाद, भौं-भौं वाद भी कहा जाता है । इस वाद के अनुसार मनुष्य ने पशु और पक्षी की ध्वनियों के अनुकरण पर कुछ शब्द बनाये और उन शब्दों से भाषा की उत्पत्ति हुई । इस वाद के अनुसार मनुष्य ने कुत्ते के भोंकने की ध्वनि का अनुकरण करके कुत्ते को पहचानने के लिए हिन्दी में 'भों-भों' या 'भौं-भौं' शब्द,

अंग्रेजी में 'Bow-Wow' शब्द, मराठी भाषा में 'भू-भू' शब्द बनाया । बिल्ली की ध्वनि का अनुकरण करके हिन्दी में 'म्याऊँ-म्याऊँ' शब्द और मराठी भाषा में 'म्याँव-म्याँव' शब्द बनाया, जिससे 'बिल्ली' का अर्थबोध होने लगा ।

मनुष्य ने कौवे की 'कांव-कांव' ध्वनि के अनुकरण पर उसे पहचानने के लिए हिन्दी में 'कांउ-कांउ' शब्द बनाया । कोयल की 'कू-कू' कूकने की ध्वनि के अनुकरण पर उसे पहचानने के लिए कोकिल शब्द बनाया गया ।

इस प्रकार मनुष्य ने पशुओं और पक्षियों की ध्वनियों के अनुकरण पर कुछ शब्द बनाये हैं । मैक्समूलर ने इस पद्धति से बने शब्दों की हँसी उडाते हुए हँसी में उसे 'बाउ-बाउ' सिद्धांत कहा । 'बाउ-बाउ' अंग्रेजी भाषा में कुत्ते की ध्वनि के अनुकरण पर बनाया गया शब्द है ।

भाषा की उत्पत्ति को जानने की दृष्टि से 'ध्वन्यात्मक अनुकरणवाद' कुछ मात्रा में निश्चित ही उपयोगी है, क्योंकि ध्वन्यात्मक अनुकरण पर स्वाभाविक रूप से कुछ सार्थक शब्द बने हैं और बनते भी हैं । ध्वन्यात्मक अनुकरणमूलक शब्द सार्थक इसलिए होते हैं कि उनसे विशिष्ट पशु या पक्षी का अर्थबोध होता है ।

लेकिन ध्वन्यात्मक अनुकरणमूलक शब्दों की संख्या सीमित है । इसलिए इस वाद पर आक्षेप करते हुए रेमन आदि ने प्रश्न उठाया है कि सीमित संख्या वाले ध्वन्यात्मक अनुकरण मूलक शब्दों से भाषा की उत्पत्ति कैसे हुई होगी । इस प्रश्न का निराकरण ध्वन्यात्मक अनुकरण से नहीं होता ।

(आ) अनुरणनात्मक अनुकरणवाद

इस वाद को 'अनुरणनमूलकतावाद' या 'अनुरणन सिद्धांत ' भी कहा जाता है । इस वाद के अनुसार मनुष्य ने निर्जीव वस्तुओं की गूँजनेवाली ध्वनि का अनुकरण करके उन्हीं का अर्थबोध कराने

के लिए अनुकरणनात्मक शब्द बनाये । इस कारण से ही घण्टे की गूँजने वाली ध्वनि का अनुकरण करके उस घण्टे का अर्थ-बोध कराने के लिए हिन्दी में 'टन-टन' शब्द और अंग्रेजी में 'डिंग-डिंग' शब्द बनाया गया । ठीक इसी तरह दरवाजा खटखटाने से या किसी निर्जीव वस्तु पर आघात करने से उत्पन्न होनेवाली ध्वनि का अनुकरण करके हिन्दी में 'खट-खट', 'ठक-ठक' आदि शब्द बनाये गये । झरने से बहते पानी से निकलनेवाली ध्वनि का अनुकरण करके हिन्दी में 'झर-झर', 'कल-कल' आदि शब्द बनाये गए जिनसे झरने के बहते पानी की विशिष्ट गति का अर्थ-बोध हो जाता है ।

(इ) दृश्यात्मक अनुकरणवाद

इस वाद के अनुसार मनुष्य ने दृश्य की विशिष्ट दशा को देखकर उसके अनुकरण के रूप में कुछ ऐसा शब्द बनाया, जिससे उस दृश्य की विशिष्ट दशा का अर्थ-बोध हो जाता है । किसी प्रकाशमान और चमकने वाले दृश्य का अनुकरण करके हिन्दी में 'जगमग', 'बगबग', 'चकाचक' शब्द बनाये गये, जिनसे उस दृश्य की विशिष्ट दशा का अर्थ-बोध हो जाता है ।

'दृश्यात्मक अनुकरणवाद' भी अत्यन्त मर्यादित रूप में भाषा की उत्पत्ति को जानने की दृष्टि से कुछ उपयोगी है, लेकिन इस प्रकार के शब्दों की संख्या अत्यन्त मर्यादित होने के कारण ऊपर (अ) के संदर्भ में अर्थात् ध्वन्यात्मक अनुकरण वाले शब्दों के संदर्भ में जो आक्षेप किया गया, वह यहाँ पर भी लागू होता है ।

3.7.7. अनुकरण सिद्धांत के विरूद्ध आपत्तियाँ

इस मत के विरूद्ध ये प्रश्न अंकित होते हैं -

i. क्या सशक्त मानव स्वयं ध्वनियाँ उत्पन्न न कर सका ? - रेनन

ii. मानव की ध्वनियों का अनुकरण क्यों न किया गया ?

iii. चंद शब्द इस प्रक्रिया से बनते हैं । भाषा के 99.9% अन्य

शब्दों के निर्माण का रहस्य यह मत उद्‌घाटित नहीं करता ।

iv. चंद भाषाओं में ऐसे ध्वन्यात्मक शब्द हैं ही नहीं, यथा उत्तरी अमरीकी 'अथबस्कन' ।

v. सभी भाषाओं में ध्वन्यनुकरण शब्द एक से क्यों नहीं हैं ?

भाषाओं के चंद शब्द जीव-ध्वन्यनुकरण पर अवश्य बने हैं यथा - ककू (अंग्रेजी), काक (संस्कृत), काकि (तेलुगु), कागे (कन्नड) कौआ (हिन्दी)

भौं-भौं (तेलुगु-कुत्ते की ध्वनि) भौंकना (हिन्दी), भौं-भौं (अंग्रेजी), गुर्रू-गुर्रू (तेलुगु), गुर-गुराना (हिन्दी) मिआऊ (चीनी बिल्ली), म्याऊँ (हिन्दी)

बें- बे (बकरी की बोली), मिमियाना बिबियाना, पिपियाना, कोकिला (संस्कृत), कोयल (हिन्दी -)

मैक्समूलर ने Bow Wow (कुत्ते की बोली) वाद कहकर इसकी खिल्ली उड़ायी है ।

यह मत भाषा के चंद शब्दों के निर्माण का रहस्य समुद्‌घाटित करता है ।

चंद विद्वान अनुरणनमूलकतावाद व दृश्यात्मक अनुकरणवाद अर्थात् दृश्य में आगत जैसे मग-मग, धग-धग शब्दों के विश्लेषण के वाद को भी इसी वाद के अंग मानते हैं ।

3.8. अनुरणनमूलकतावाद

भाषा की उत्पत्ति के संबंध में अनुरणनमूलक सिद्धांत का सबसे पहले प्लेटो ने उल्लेख किया था । बाद में जर्मन विद्वान मैक्समूलर ने इस सिद्धांत को व्यवस्थित किया । उनके अनुसार शब्द और अर्थ में स्वाभाविक संबंध होता है ।

संपूर्ण प्रकृति में यह प्रवृत्ति दृष्टिगत होती है कि आघात होने पर प्रत्येक वस्तु ध्वनि करती है । फिर मनुष्य तो प्रकृति की सर्वश्रेष्ठ रचना ठहरी । उसमें प्रारंभ से ही एक ऐसी शक्ति थी । वह विभिन्न वस्तुओं के एक दूसरे के संपर्क से अथवा टकराने से उत्पन्न होनेवाली ध्वनियों को ग्रहण कर लेता था । इन ध्वनियों के आधार पर गढ़े हुए शब्दों से ही भाषा की उत्पत्ति और विकास हुआ है । हिन्दी में कल-कल, छलछल, टपटप, फटफट, भड़-भड़, खटपट, खड़-खड़, झर-झर, धड़कन, फड़कन आदि अनेक शब्द इस आधार पर बनते हैं ।

3.8.1. अनुरणनमूलकवाद की समीक्षा

अनुरणन सिद्धांत भी भाषा की उत्पत्ति के संबंध में महत्वपूर्ण प्रकाश नहीं डालता । यह संसार की विभिन्न भाषाओं में पाये जानेवाले कुछ शब्दों की व्युत्पत्ति के ज्ञान में सहायता देता है । इनके आधार पर भाषा की उत्पत्ति का प्रश्न हल नहीं किया जा सकता । अनुरणन सिद्धांत की अवैज्ञानकिता का अनुभव करके इस सिद्धांत के प्रमुख समर्थक मैक्समूलर ने भी अंत में इसका परित्याग कर दिया था ।

3.9. धातु सिद्धांत

'भाषा विज्ञान एवं हिन्दी भाषा' ग्रन्थ में धातु सिद्धांत इस प्रकार वर्णित है -

धातु सिद्धांत का प्रतिपादन सबसे पहले यूनानी दार्शनिक प्लॉटो ने किया । बाद में जर्मन विद्वान हेस ने इस सिद्धांत को अधिक व्यवस्थित रूप दिया । उनके शिष्य स्टाइंन्थाल ने इसे तदधिक सुव्यवस्थित रूप दिया ।

प्रसिद्ध जर्मन मैक्समूलर ने इस सिद्धांत को विस्तार से प्रतिपादित किया । मैक्समूलर के अनुसार सृष्टि के आरंभ में एक ऐसी शक्ति थी, जिसने चार या पाँच सौ धातुओं को जन्म दिया । इसके बाद मनुष्य की यह शक्ति लुप्त हो गयी । इन धातुओं पर

ही भाषा का वर्तमान भवन निर्मित है । यह 'नेटिविस्टिक थियरी' के नाम से भी ज्ञात है ।

3.9.1. पाणिनि का 'धातोः सूत्र'

दो हजार वर्ष पूर्व पाणिनि ने भी ''धातोः सूत्र'' लिखकर यह सिद्ध किया था कि भाषा की रचना धातुओं के आधार पर ही हुई है । पाणिनि ने लगभग 800 धातुओं के बल पर संस्कृत भाषा का भवन स्थापित किया है ।

3.9.2. धातु प्रधान भाषाएँ

संस्कृत के अतिरिक्त ग्रीक, लैटिन, अरबी तथा अंग्रेजी भाषाओं में भी धातुओं का प्राबल्य दृग्गोचर होता है । अंग्रेजी भाषा के लग-भग 2,50,000 शब्द कुछ ही धातुओं से बने हैं । जर्मन शब्द Ber-an से Bear, Burden, Brier, Borrow, Barley, Beer, Born, Birth आदि अनेक अंग्रेजी शब्दों की व्युत्पत्ति हुई है । लैटिन में इसके लिए "Fero" का प्रयोग होता है । इससे Fertile, Reference, Deference आदि शब्द बने हैं ।

3.9.3. धातु सिद्धांत समीक्षा : डॉ.मितालीजी का मत

डॉ.मिताली भट्टाचारजी का कथन है कि भाषा की उत्पत्ति में धातु सिद्धांत का योगदान अवश्य है, किन्तु धातु भाषा का मूल घटक नहीं है ।

3.9.3.1. डॉ.तारापुरेवाल का मत

तारापुरेवाल का विचार है - यह सत्य है कि धातुएँ वे तत्व हैं जिनसे भाषाओं की रचना हुई है । किन्तु केवल धातुओं के आधार पर भाषा के अस्तित्व की कल्पना नहीं की जा सकती ।

3.9.3.2. धातु कल्पनाजन्य है

डॉ.सरयू प्रसाद जी के अनुसार धातु भाषा का अनिवार्य तथा

स्वाभाविक अंग नहीं है । स्वयं पाणिनि ने धातुओं की कल्पना की है । धातु भाषा की आदि की वस्तु न होकर अन्त की वस्तु है ।

3.9.3.3. धातु-सिद्धांत के विरुद्ध एक महत्वपूर्ण आपत्ति

यह कथन समुचित नहीं है कि मनुष्य में प्रारंभ में एक शक्ति थी जिसने कुछ धातुओं को जन्म दिया । संसार की कुछ भाषाओं एवं एकाक्षर परिवार की अनेक भाषाओं में धातु का अस्तित्व नहीं है । चीनी, तिब्बती, स्यामी, बर्मी आदि भाषाओं में धातु नाम की कोई चीज़ नहीं है । अतः धातु सिद्धांत के आधार पर भाषा की उत्पत्ति नहीं मानी जा सकती है ।

3.9.3.4. धातु सिद्धांत के संबंध में डॉ.ज्ञानराज काशीनाथ गायकवाड़ के विचार

डॉ.ज्ञानराज काशीनाथ गायकवाड़ लिखते हैं कि धातुवाद या सिद्धांत को रणन-वाद या सिद्धांत तथा डिंग-डांगवाद या सिद्धांत भी कहा जाता है । इस वाद का सर्वप्रथम संकेत दार्शनिक प्लेटो ने किया था । आगे चलकर अपने व्याख्यान के माध्यम से इस वाद को व्यवस्थित रूप देने का प्रयत्न जर्मन प्रोफेसर हेस ने किया और उनके ही शिष्य डॉ.स्टाइन्थाल ने उस व्याख्यान को मुद्रित रूप में विद्वानों के सामने प्रस्तुत किया । फिर मैक्समूलर ने उस मत को अपनी पुस्तक में स्थान दिया, लेकिन बाद में उन्होंने उस मत को भाषा की उत्पत्ति को जानने की दृष्टि से निरर्थक माना ।

धातुवाद के अनुसार महत्व की पहली बात यह है कि संसार की प्रत्येक वस्तु अपने में एक विशिष्ट तथा स्वतन्त्र ध्वनि रखती है । महत्व की दूसरी बात यह है कि मनुष्य जैसे-जैसे, किसी वस्तु की सहायता से एक-एक वस्तु पर चोट (आघात) करता गया, वैसे-वैसे एक-एक वस्तु की विशिष्ट तथा स्वतंत्र ध्वनि व्यक्त होकर मनुष्य को सुनने को मिली और मनुष्य ने उस-उस वस्तु को पहचानने के लिए उस-उस वस्तु की विशिष्ट तथा स्वतन्त्र ध्वनि को

ध्यान में रख लिया । परिणाम यह हुआ कि उसके बाद मनुष्य जिस-जिस वस्तु के पास जाने लगा, तब-तब वह उस विशिष्ट वस्तु की पहचान के लिए अपने मुख से उस वस्तु की विशिष्ट तथा स्वतन्त्र ध्वनि का उच्चारण करने लगा और इस प्रकार की रीति से ध्वन्यात्मक शब्द बनाये गये, जिन्हें मूल शब्द अर्थात् 'धातु' माना गया । तीसरी महत्व की बात यह है कि इस प्रकार के 400-500 मूल शब्दों अर्थात् धातुओं के आधार पर भाषा की उत्पत्ति हुई ।

धातुवाद के अनुसार उन धातुओं की ध्वनियों और उन धातुओं के अर्थों में एक रहस्यात्मक संबंध को स्वीकार किया गया । कुछ दार्शनिकों ने भी धातुवाद को किसी रूप में माना था और उसे नेटिविस्टिक थियरी नाम दिया था ।

धातुवाद की उपर्युक्त दूसरी बात के सन्दर्भ में मनुष्य द्वारा डंडे से घण्टे पर चोट करने से डिंग-डिंग के रूप में घण्टे की विशिष्ट तथा स्वतन्त्र व्यक्त होने वाली ध्वनि का उदाहरण दिया गया है । इसलिए 'धातुवाद' को डिंग-डांग-वाद' कहा गया है । डिंग-डांग इस ध्वनि में 'रणन' के होने से डिंग-डांग-वाद को रणनवाद भी कहा जाता है ।

धातुवाद पर पहली आपत्ति यह उठती है कि वह डिंग-डांग' धातु अर्थात् ध्वन्यात्मक अर्थपूर्ण मूल शब्द को छोड़कर अन्य सभी धातुओं को वस्तुनिष्ठ ठोस प्रमाणों के आधार पर क्यों स्पष्ट नहीं कर पाया ? विज्ञान में क्या ठोस प्रमाणों के बिना केवल कल्पना से काम बनता है ? दूसरी आपत्ति यह उठती है कि संसार में जिन भाषाओं में धातुओं का पूर्णतया अभाव है, उनकी उत्पत्ति कैसे हुई होगी ? तीसरी आपत्ति यह उठती है कि भाषा की उत्पत्ति होने के लिए केवल 'धातुएँ' कैसे पर्याप्त हो सकती हैं । क्या उसके लिए उपसर्ग, प्रत्यय आदि की आवश्यकता नहीं होती ? इन सभी आपत्तियों का समाधान 'धातुवाद' से नहीं हो पाता । इस कारण से ही मैक्समूलर ने भी बाद में भाषा की उत्पत्ति को जानने की दृष्टि से धातुवाद को निरर्थक माना ।

3.10. संपर्क सिद्धांत

रेवेज का विचार है कि मनुष्य में परस्पर संपर्क की जन्मजात प्रवृत्ति होती है । प्रारंभ में यह संपर्क भावात्मक स्तर पर हुआ होगा और बाद में वह विचारों के स्तर पर विकसित हुआ होगा ।

यह दूसरी अवस्था ही भाषा के विकास की अवस्था रही होगी । रेवेज के अनुसार हर्ष, दुःख, शोक, भय आदि भावावेश की दशाओं में मनुष्य के मुख से निःसृत होनेवाली ध्वनियाँ विनिमय की भाषा नहीं है । उनका विचार है कि चिल्लाने, पुकारने आदि की सूचक ध्वनियों द्वारा भाषा का विकास हुआ, जो बाद में विचारात्मक स्तर पर मानवीय संपर्क की ओर अधिक विकसित होने पर पुष्ट होता गया होगा ।

3.10.1. संपर्क सिद्धांत की समीक्षा

रेवेज महोदय द्वारा प्रतिपादित संपर्क सिद्धांत भी निरर्थक सिद्धांत है । इस की सबसे बड़ी त्रुटि यह है कि पहले से किसी भाषा का कोई अस्तित्व ही नहीं था, तब ऐसी स्थिति में मनुष्यों के परस्पर सम्पर्क की कल्पना ही कैसे की जा सकती है ?

3.11 संकेत सिद्धांत / इंगित सिद्धांत

मनुष्य का यह स्वभाव है कि वह अपने भावों और विचारों को स्पष्ट करने के लिये कई संकेतों का प्रयोग किया करता है । वह कुछ क्रियाओं के अंतर्गत विशिष्ट प्रकार की ध्वनियाँ किया करता है । उदाहरण के लिये बालक पानी पीते समय पा पा की ध्वनि करता है । इसी आधार पर संकेत या इंगित सिद्धांत के समर्थक विद्वानों ने यह कल्पना की है कि प्रारंभ में मनुष्य अपने भावों व विचारों को अपने अंग प्रयोग तथा मुखाकृति द्वारा व्यक्त किया करता होगा । इन्हीं चेष्टाओं का उसने बाद में वाणी द्वारा अनुकरण करना सीख लिया होगा । पानी पीते समय होठों से 'प्पा

पा' ध्वनि करता है, जिसमें पानी शब्द और अन्य ध्वनियों की उत्पत्ति हुई होगी ।

3.11.1. संकेत सिद्धांत के प्रमुख प्रवर्तक

संकेत सिद्धांत के प्रमुख प्रवर्तक राये हैं । इनके अतिरिक्त डार्विन, रिचर्ड तथा अलेक्जेंडर जोहानसन ने भी इस सिद्धांत का विस्तार से प्रतिपादन किया है ।

3.11.2. जोहानसन के विचार

जोहानसन ने भाषा के विकास के चार सोपान माने हैं -

1. **भाव व्यंजक ध्वनियाँ** - जिनका उच्चारण मनुष्य भय, क्रोध, दुःख, उल्लास आदि के कारण पशुओं की भाँति करता है -
2. **अनुकरणात्मक शब्द** - विभिन्न जीवजंतुओं तथा निर्जीव पदार्थों की ध्वनियों के अनुकरण पर निर्मित शब्द,
3. **भाव संकेत या इंगित** - इनका आधार भी अनुकरण ही है, किंतु ये बाह्य-संकेत न होकर अपने अंग प्रत्यंगों के संकेत से उत्पन्न शब्द हैं,
4. **मानसिक विकास से संजनित शब्द** - मानव के मानसिक विकास होने पर सूक्ष्म भावों के लिये भी धीरे धीरे शब्दों की रचना हुई ।

3.11.3. संकेत सिद्धांत की समीक्षा

इस सिद्धांत का आधार ही अवैज्ञानिक है । यह ठीक है कि मनुष्य स्वभावतः अनुकरणशील है । किंतु वह अपने अंग-प्रत्यंगों की चेष्टाओं का वाणी द्वारा अनुकरण करता रहा होगा-इस तर्क में कोई बल नहीं है ।

3.12. निर्णय सिद्धांत

इस सिद्धांत के अन्य नाम हैं स्वीकारवाद, प्रतीकवाद, संकेतवाद अथवा स्वेच्छावाद । यह सिद्धांत संकेत सिद्धांत तथा

संपर्क सिद्धांत का ही दूसरा रूप है । इस सिद्धांत के समर्थकों का यह मत है कि प्रारंभ में मनुष्य संकेतों व इशारों से ही परस्पर विचार विनिमय करते रहे होंगे । बाद में संपर्क के अधिक बढ़ जाने पर उन्होंने परस्पर विनिमय के किसी सरल तथा उत्तम माध्यम को खोजने के लिये एक विशाल सभा में विभिन्न ध्वनि संकेतों के संबंध में एक सर्व सम्मत निर्णय ले लिया होगा । भाषा इसी निर्णय का परिणाम है ।

3.12.1. निर्णय सिद्धांत की समीक्षा

निर्णय सिद्धांत संकेत या इंगित सिद्धांत एवं सम्पर्क सिद्धांत का ही दूसरा रूप है । यह अपने उद्देश्य में सफल नहीं रहा है । इस सिद्धांत में अनेक श्रुटियाँ हैं । सबसे प्रमुख यह है कि जब पहले कोई निश्चित भाषा थी ही नहीं, तब ऐसी स्थिति में कैसे बृहत्सभा का आयोजन किया गया और उसमें किस प्रकार भाषा के संबंध में इतने महत्वपूर्ण निर्णय लिये जा सके । भाषा के अभाव में इस कार्रवाई की कल्पना तक तर्कसंगत नहीं होती । जेस्पर्सन के साथ आज अधिकांश भाषावैज्ञानिक इस तथ्य को लेकर एकमत हैं कि भाषा की रचना मानव द्वारा जान बूझकर किये गये किसी भी विशेष प्रयास द्वारा नहीं हुई है ।

3.13. विकासवाद

भाषा की उत्पत्ति के संबंध में विद्वानों का यह दृढ़ विचार है कि भाषा विकास की स्वाभाविक क्रिया का ही परिणाम है । विकासवाद के समर्थकों के अनुसार मानव प्रारंभ में अन्यान्य पशु-पक्षियों की भाँति कुछ निरर्थक ध्वनियों का प्रयोग करता था । बाद में धीरे धीरे इनसे ही भाषा का विकास हुआ ।

3.13.1. स्वीट के विचार

इस सिद्धांत का प्रतिपादन करते हुए स्वीट ने कहा है कि भाषा की उत्पत्ति किसी एक सिद्धांत पर आधारित नहीं है । भाषा

के ध्वनि समूह का क्रमिक विकास हुआ है । यह धारणा ठीक नहीं कि पहले अनुकरण वाले शब्द निर्मित हुए । या पहले मनोभावों को व्यक्त करने वाले शब्द बने । स्वीट के अनुसार प्रारम्भ में भाषा में तीन प्रकार के शब्द थे -

i. **अनुकरणात्मक शब्द** - विभिन्न ध्वनियों के अनुकरण पर गढ़े गये शब्द, यथा - पौ-पौं, भौं-भौं, चहचहाना, किटकिटाना कौआ, कोयल, घुग्घू आदि,

ii. **मनोभावबोधक शब्द** - भावावेश की दशा में उत्पन्न शब्द यथा - ओह, अरे, हाय, वाह आदि,

iii. **प्रतीकात्मक शब्द** - विभिन्न क्रियाओं, विविध संबंधियों, माता-पिता, भाई-बहन आदि के लिये प्रयुक्त होनेवाले शब्द यथा - यह, वह, वे, उनको आदि ।

स्वीट महोदय ने तृतीय श्रेणी के शब्दों को भाषा के विकास की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण माना है । बालक पहले निरर्थक ध्वनियाँ जैसे मा-मा, पा-पा आदि का उच्चारण करता है । फिर ये ध्वनियाँ सार्थक रूप में प्रयुक्त होने लगती हैं ।

3.13.2. विकासवाद की समीक्षा

विकासवाद का सिद्धांत अन्य सिद्धांतों की अपेक्षा कहीं अधिक तर्कसंगत व वैज्ञानिक है । स्वीट के अतिरिक्त अनेक विद्वानों ने भी इसका समर्थन किया है । किंतु भाषा की उत्पत्ति के प्रश्न को हल करने में यह सिद्धांत भी असमर्थ रहा है । इस सिद्धांत के विरुद्ध भी महत्वपूर्ण आपत्तियाँ हैं -

1. सर्वप्रथम विकासवाद का सिद्धांत यह स्पष्ट नहीं कर पाता कि प्रारंभ में किसी विशिष्ट क्रिया या वस्तु का एक विशिष्ट नाम कैसे निश्चित हुआ । किसी विशेष ध्वनि का एक निश्चित विशेष अर्थ कैसे हो गया ? यह तर्क मान्य नहीं है कि अकारण किसी क्रिया या वस्तु को किसी नाम से पुकारा गया और उसका वही नाम प्रचलित हो गया ।

2. यह धारणा भी गलत है कि आदिम या प्राचीन भाषाओं की अपेक्षा वर्तमान भाषाओं को अधिक जटिल एवं विकसित होना चाहिये ।

3.14. समन्वय सिद्धांत

विकासवाद सिद्धांत के इसी अधूरेपन को देखते हुए स्वीट आदि विद्वानों ने भाषा की उत्पत्ति विभिन्न सिद्धांतों के समन्वय से मानी है । इस सिद्धांत के अनुसार अनुकरण, प्रतीकवाद, मनोभावाभिव्यक्ति, विकासवाद, श्रमपरिश्रमपरिहरण मूलक आदि सिद्धांतों के समन्वय से ही भाषा की उत्पत्ति हुई है । इस सिद्धांत के विरूद्ध भी कई आपत्तियाँ हैं । सर्वप्रथम यह भाषा के सम्पूर्ण शब्द भंडार की व्याख्या नहीं कर पाता । इस सिद्धांत की सबसे बड़ी कमी यह है कि इसके अनुसार मनुष्य प्रारंभ में पशुवत् घोषित होता है । यह सिद्धांत इस तथ्य को स्पष्ट नहीं कर पाता कि मानव प्रारंभ में कुछ ध्वनियाँ कैसे व क्यों कर बोलता था । भाषा उत्पत्ति की इस उलझन को देखकर हीं वान्द्रियैज ने स्पष्ट शब्दों में लिखा है कि भाषा उत्पत्ति का प्रश्न भाषा विज्ञान से संबंधित नहीं है ।

समन्वय सिद्धांत के विवेचन में कतिपय विद्वानों ने औपचारिक उत्पत्तिवाद, टा-टा वाद, संगीत सिद्धांत, प्रतिभा सिद्धांत आदि का उल्लेख किया है ।

3.14.1. औपचारिक उत्पत्तिवाद

इस सिद्धांत के अनुसार ज्ञात द्वारा अज्ञात की व्याख्या करने की सादृश्याधारित उपचार प्रवृत्ति से शब्दों एवं भाषा की उत्पत्ति हुई है । बच्चे वायुयान की ध्वनि सुनकर - 'मोटर मोटर' चिल्लाते हैं । रूप सादृश्य के आधार पर पाइप (बाँसुरी) नल के अर्थ में प्रयुक्त होता है ।

मत परीक्षा - भाषा के कई शब्द उपचार प्रवृत्ति से बने हैं । किंतु भाषा के सभी अंगों की उत्पत्ति इससे सिद्ध नहीं होती ।

3.14.2. टा-टा सिद्धांत

इस सिद्धांत के अनुसार आदि मानव काम करते समय उच्चारण के अवयवों की गति का अनुकरण करता हुआ जो ध्वनि शब्द मुख से उच्चरित करता था, उन्हीं से धीरे-धीरे भाषा का विकास हुआ । यह सिद्धांत इंगित सिद्धांत से मिलता जुलता है ।

सिद्धांत की परीक्षा - मत में सूचित श्रमावयव गति के अनुकरण पर मुँह से ध्वनि उच्चारण करने की प्रवृत्ति जानवरों में भी नहीं पायी जाती है तो मनुष्य में यह प्रवृत्ति आयेगी कहाँ से ?

3.14.3. संगीत सिद्धांत

इस सिद्धांत के अनुसार भाषा की व्युत्पत्ति मानव के संगीत से हुई है । डार्विन, स्पेन्सर, जेसपर्सन आदि इसके समर्थक हैं । इस मत के अनुसार भावावस्था में गाते समय जो अक्षर मुख से निकलते हैं, उनसे कालांतर में अर्थ का संबंध हो गया और इसी से भाषा का जन्म हुआ ।

मत परीक्षा - इस का अर्थ है कि गुनगुनाहट से भाषा बनी है । यह सच है तो अब भी भाषाएँ बनायी जा सकती हैं । इस संगीत का संबंध प्रेम से अधिक है । इसलिए इसे **प्रेम सिद्धांत** भी कहते हैं ।

प्रो. हडसन के विद्यार्थियों ने सादृश्य के आधार पर इसे प्रेम सिद्धांत (Woo-Woo Theory) का नाम दिया है ।

3.14.3.1. संगीत सिद्धांत : डॉ.ज्ञानराज काशीनाथ गायकवाड़ के विचार

संगीतवाद के संबंध में डॉ.ज्ञानराज काशीनाथ गायकवाड़ लिखते हैं कि डार्विन और स्पेंसर ने सबसे पहले इस वाद का उल्लेख किया था । उनके बाद जेसपर्सन ने भाषा की उत्पत्ति के मूल में संगीतवाद को स्वीकार करते हुए माना कि भाषा की उत्पत्ति खेल के रूप में हुई और मनुष्य के उच्चारण अवयव खाली समय में गाने के खेल के उच्चरण करने के आदी हो गये । इस प्रकार की मान्यता के कारण इस संगीत सिद्धांत को 'गायन-खेल-सिद्धांत' भी कहा गया है । इस सिद्धांत के अनुसार आदि मानव को भावुक होने के कारण गाने के खेल में उसे गुनगुनाने के रूप मे कुछ अर्थरहित अक्षरों का उच्चारण करने में आनन्द मिलता रहा । फिर उसने विशिष्ट-विशिष्ट स्थिति में विशिष्ट-विशिष्ट अक्षरों का प्रयोग किया जिससे वे अर्थहीन अक्षर सार्थक बनकर भाषा की उत्पत्ति होने के कारण बन गए ।

मनुष्य के भावुक होने का संबंध उसके प्रेम-भाव के साथ जोड़ा गया, इसलिए 'संगीत-सिद्धांत' को 'प्रेम संबंध सिद्धांत' भी कहा जाने लगा । इसे अंग्रेजी में 'Woo-Woo Theory' कहते हैं ।

वह वाद केवल अनुमान पर ही आधारित है । वह अपने समर्थन के लिए ठोस प्रमाणों को प्रस्तुत कर यह सिद्ध नहीं कर सका कि किस प्रकार गाने के खेल में गुनगुनाने के रूप में अर्थहीन अक्षरों का उच्चारण होता रहा और फिर वे अक्षर सार्थक शब्द बन गये ।

3.15. निष्कर्ष

भाषा उत्पत्ति का प्रश्न भाषा विज्ञान के अध्ययन क्षेत्र में नहीं आता । साथ ही अनुमान या कल्पना प्रसूत होने के कारण भी ये सिद्धांत विज्ञान के नहीं, वरन् दर्शन के अंग या कल्पनामात्र हो

सकते हैं । संभवतः इसी सत्य को समझते हुए सन् 1866 में फ्रांस की भाषाविज्ञान समिति ने इस प्रश्न पर चर्चा करना ही अनावश्यक घोषित कर दिया था । यह सिद्धांत कहाँ तक यथार्थ के धरातल पर उतरता है, यह अब तक स्पष्ट नहीं हो पाया है । भाषोत्पत्ति के संबंध में आज भी अनेक भाषा-वैज्ञानिक निरुत्तर हैं । प्रस्तुत इकाई में भाषा की उत्पत्ति के प्रमुख सिद्धांतों से सुधी पाठकों को अवगत कराने का प्रयास किया गया है ।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि भाषा की उत्पत्ति इस घटक में उद्धृत किसी एक सिद्धांत से बने हुए शब्दों से नहीं, वरन् सबके समन्वय से बने हुए शब्दों से हुई है । भाषा के रूपायन में विकासवाद का भी सक्षम योगदान है । दिव्योत्पत्ति सिद्धांत, मनोभावाभिव्यक्त सिद्धांत, अनुकरण सिद्धांत, अनुरणन सिद्धांत, संकेत सिद्धांत, संगीत सिद्धांत, संपर्क सिद्धांत, श्रमपरिहरणमूलकतावाद, समन्वय सिद्धांत, विकासवाद, प्रतिभा सिद्धांत, प्रेरणा सिद्धांत आदि सभी सिद्धांतों के योग से भाषा की उत्पत्ति हुई है । कोई भी भाषा सौ दो सौ साल में नहीं बनती, हज़ारों सालों से शब्द प्राप्त करती हुई अंर्तधारा के रूप में रहकर अंत में वसुंधरा की गोद में अमृतधारा के रूप में बहने लगती है । उसकी उत्पत्ति और विकास में कई सिद्धांतों व मानवों का समन्वित योगदान रहता है ।

3.16. सारांश

भाषा और मानव का अनादि काल से ही घनिष्ठ संबंध रहा है । जिज्ञासु मन प्रश्न अवश्य करता है कि इस भाषा की कैसे और कहाँ से उत्पत्ति हुई है । प्राचीन काल से ही इस संबंध में गहन चिंतन मनन किया गया है और प्रयास किया गया है कि यथासंभव समाधान ढूँढा जाय । समसामयिक प्रयासों से अनेक सिद्धांत उभरकर आये, जिन्हें यहाँ उल्लिखित किया गया है । कुल ग्यारह प्रमुख सिद्धांतों का विवेचन किया गया है और साथ ही उन सिद्धांतों की समीक्षा भी प्रस्तुत की गयी है ।

इस घटक में कई विषयों का प्रतिपादन किया गया है । समुद्घाटित प्रधान अंशों में भाषा की उत्पत्ति के संबंध में प्रचलित सिद्धांतों का विवेचन तथा उसकी समीक्षा मुख्य है । भाषा की उत्पत्ति के संबंध में प्रचलित विभिन्न सिद्धांत किसी भी भाषा में उपलब्ध कतिपय शब्दों की उत्पत्ति का रहस्य बताते हैं । एक एक सिद्धांत से केवल चंद शब्दों की उत्पत्ति का रहस्य प्रकाश में आता है । शेष सहस्त्रों शब्दों के समुद्भव के रहस्य की कुंजी इन सिद्धांतों के यहाँ नहीं है ।

इस घटक में भाषा की उत्पत्ति के संबंध में प्रचलित विभिन्न सिद्धांतों का समीक्षात्मक विवेचन किया गया है । सिद्धांतों की सूची नीचे दी जा रही है -

सिद्धांत	प्रतिपादक	बने हुए शब्द
1. दैवी सिद्धांत	हिन्दू, मुस्लिम, ईसाई, जैन बौद्ध धर्मावलंबी, पाणिनि, प्रो.राधाकृष्ण, डॉ.मिताली भट्टाचारजी, श्लेगल, मैथनर	सभी भाषाएँ
2. मनोभावाभिव्यक्ति वाद	डार्विन, जेसपर्सन, काण्डलिक	आह, ओह, अरे, धत्, धिक्
3. श्रमपरिहरणमूलकतावाद	नुहिरे	छियो छियो, यो--हे-हो
4. अनुकरण सिद्धांत	हर्डर	कोयल, कूहू-कूहू, काँव-काँव, म्याँऊ-म्याँऊ
5. अनुरणन सिद्धांत	प्लेटो, मैक्समूलर	कल-कल, टप-टप

6. धातु सिद्धांत	प्लेटो, मैक्समूलर पाणिनि	बेराम (जर्मन) कर
7. संपर्क सिद्धांत	रेवेज	बिलखना पंचायत
8. संकेत सिद्धांत	राये, डार्विन, रिचर्ड, जोहानसन	अंगों की चेष्टाओं से जनित ध्वनियों से बने शब्द
9. निर्णय सिद्धांत	--	भाषा के अनेकानेक शब्द, यथा - पेड़-पौधे
10. विकासवाद	स्वीट	अनुकरणनात्मक, मनोभाव बोधक, प्रतीकात्मक शब्द, वे, ये आदि ।
11. समन्वय सिद्धांत	स्वीट	सब सिद्धांतों के समन्वय से बने शब्द ।

3.17. बोध प्रश्न

1. भाषा की उत्पत्ति से संबंधित प्रमुख सिद्धांतों का विवेचन कीजिये ।
2. **टिप्पणी लिखिए -**

i. दिव्योत्पत्ति सिद्धांत

ii. समन्वय सिद्धांत ।

3.18. उत्तर के अंश अभ्यास के प्रश्नों के संबंध में

1. **भाषा की उत्पत्ति से संबंधित सिद्धांत**

भाषा की उत्पत्ति से संबंधित कई सिद्धांत प्रकाश में लाये गये हैं, यथा -

1. दैवी सिद्धांत
2. धातु सिद्धांत
3. अनुकरणमूलकतावाद सिद्धांत
4. मनोभावाभिव्यक्तिवाद
5. श्रमपरिहरण मूलकतावाद
6. अनुरणनमूलक सिद्धांत
7. संकेत सिद्धांत
8. संपर्क सिद्धांत
9. निर्णय सिद्धांत
10. विकासवाद
11. समन्वय / मिश्रित सिद्धांत

1. दैवी सिद्धांत

दैवी सिद्धांत से यह ज्ञात होता है कि भाषा में उपलब्ध चंद शब्दों का आकस्मिक गठन मानव के रहस्यात्मक क्षणों में हुआ होगा । भाषाओं का सृजन परम सत्ता ने किया है ।

2. धातु सिद्धांत

धातु सिद्धांत से सृष्टि के आरंभ में उपलब्ध तथा बाद में लुप्त सृजन शक्ति से उद्‌भूत 500 धातुओं से भाषा की निर्मिति का रहस्य ज्ञात होता है ।

3. मनोभावाभिव्यक्तिवाद

मनोभावाभिव्यक्तिवाद से विभिन्न मनोभावों के संदर्भ में मानव के मुँह से अकस्मात् निःसृत आह, हाय, अरे, धिक् आदि शब्दों की उत्पत्ति का क्रम ज्ञात होता है ।

4. श्रमपरिहरणमूलकतावाद

श्रमपरिहरणमूलकतावाद से श्रम करते हुए व्यक्ति के मुख से निकलने वाले छियो छियो, यो हे हो, आदि शब्दों की निर्मिति का रहस्य समुद्‌घाटित होता है ।

5. अनुकरण सिद्धांत

अनुकरण सिद्धांत से प्राकृतिक ध्वनियों के अनुकरण से मानव के उच्चारण अवयवों से निःसृत हिनहिनाना, काँव-काँव जैसे शब्दों के गठन का रहस्य प्रकाश में आता है ।

6. अनुरणन सिद्धांत

अनुरणन सिद्धांत से आघात होने पर विभिन्न वस्तुओं से निःसृत ध्वनियों के आधार पर बने हुए अनुरणन शब्द यथा कल-कल, छल-छल आदि की व्युत्पत्ति ज्ञात होती है ।

7. संपर्क सिद्धांत

इस सिद्धांत से भावाभिवेश की दशा में मनुष्य के चिल्लाने पुकारने आदि की सूचक ध्वनियों से भाषा के विकास का कल्पित रहस्य ज्ञात होता है ।

8. संकेत सिद्धांत

इस सिद्धांत का प्रतिपादन है कि आरंभ में मनुष्य अपने भावों को अपने अंगों की आकृति से व्यक्त करता था । बाद में कुछ संकेत ध्वनियों से उन भावों को व्यक्त करने लगा । इन्हीं संकेतों से भाषा के निर्मित होने का कल्पित तथ्य यह सिद्धांत प्रतिपादित करता है ।

9. निर्णय सिद्धांत

यह सिद्धांत यह धारणा व्यक्त करता है कि मनुष्यों ने बृहत्सभा में यह निर्णय लिया कि किन वस्तुओं व भावों के लिए कौन से ध्वनि संकेतों का प्रयोग हो । यह केवल कपोल कल्पित है ।

10. विकासवाद

इस वाद के अनुसार भाषा विकास की स्वाभाविक क्रिया का ही परिणाम है । सभी सिद्धांतों से प्राप्त शब्दों से धीरे धीरे भाषा का निर्माण हुआ है ।

11. समन्वय सिद्धांत

यह सिद्धांत यह प्रतिपादित करता है कि भाषा की उत्पत्ति उपर्युक्त सभी वादों के समन्वय से हुई है । उपर्युक्त सिद्धांतों के अतिरिक्त भाषा-विज्ञान क्षेत्र में संगीत सिद्धांत, प्रतिभा सिद्धांत आदि भी प्रचलित हैं । उत्तर में सिद्धांतों का सांगोपांग विवेचन अपेक्षित है ।

2. टिप्पणी

(i) दिव्योत्पत्ति सिद्धांत

यह माना जाता है कि भाषा की उत्पत्ति ईश्वर प्रदत्त है । इस मत के प्रतिपादकों के अनुसार मानव दैवी प्रेरणा से बोलने लिखने लगता है । भाषा मानव को ईश्वर के अन्य वरदानों की भाँति एक सहज भगवत्कृपा का ही प्रसाद है । वैदिक पंडितगण 'संस्कृत को देववणी' बताते हैं । बौद्धों के मनातुसार मागधी का पाली रूप दैवी तथा विश्व की आदि भाषा है । ईसाई मान्यतानुसार भी भाषा दैवी प्रदत्त मानी जाती है । 'हिब्रू' भाषा ईसाइयों के अनुसार मूल भाषा है । इस्लाम धर्मावलम्बी भी यही मानते हैं कि खुदा ने पैगम्बर को अरबी भाषा सिखाई थी । इस शाखा के अनेक समर्थकों का यही विचार है कि दैवी सिद्धांत ही भाषोत्पत्ति का सही सिद्धांत है । इनमें प्रमुखतः प्रो.राधाकृष्ण मुदलियार, डॉ.मिताली भट्टाचारजी, श्लेगल, मैथनर आदि हैं । परंतु डॉ.सरयू प्रसाद के शब्दों में 'आधुनिक वैज्ञानिक युग के मनीषी भाषा की उत्पत्ति दैवीय नहीं मानते हैं । यह केवल अंध विश्वास मात्र है । उत्तर में सिद्धांत की समीक्षा अपेक्षित है ।

(ii) समन्वय सिद्धांत

स्वीट आदि विद्वानों ने भाषा की उत्पत्ति भिन्न भिन्न सिद्धांतों के समन्वय से मानी है । इनके अनुसार अनुकरणवाद, प्रतीकवाद, मनोभावाभिव्यक्ति सिद्धांत, विकासवाद, परिहरणमूलकवाद आदि सिद्धांतों के समन्वय से ही भाषा की उत्पत्ति हुई है । परंतु इस

सिद्धांत की सबसे बड़ी कमी यह है कि मनुष्य प्रारंभ में पशुवत् घोषित किया गया है और इस दशा में वह समन्वयज्ञान कैसे प्राप्त कर सकता है ? यह सिद्धांत इस तथ्य को स्पष्ट नहीं कर पाता कि मानव प्रारंभ में कुछ ध्वनियाँ कैसे व क्यों कर बोलता था । उत्तर में समन्वय सिद्धांत का निरूपण सोदाहरण होना चाहिए ।

3.19. शब्दावली

1.	उत्पत्ति	-	Origin
2.	विकास	-	Development
3.	सिद्धांत	-	Principle/Theory
4.	दिव्योत्पत्ति सिद्धांत	-	Theory of Divine Origin
5.	अनुकरण सिद्धांत	-	Theory of Imitation
6.	धातु सिद्धांत	-	Root Theory
7.	मनोभावाभिव्यक्तिवाद	-	Po0h Pooh Theory
8.	अनुरणनमूलक सिद्धांत	-	DingDongTheory / Pathogenic theory
9.	संकेत सिद्धांत	-	Gesture Theory
10.	संपर्क सिद्धांत	-	Contact Theory
11.	निर्णय सिद्धांत	-	Agreement Theory
12.	विकासवाद का सिद्धांत	-	Theory of Evolution
13.	समन्वय/मिश्रित सिद्धांत	-	Mixed Theory
14.	अनुकरणमूलकतावाद सिद्धांत	-	Bow-Bow or Onomato Poetic Theory
15.	श्रमपरिहरणमूलकतावाद	-	To-To-Theory
16.	प्राचीन विधान	-	Old Testament

3.20. संदर्भ ग्रंथ एवं निबंध

1. काव्यादर्श - दंडी
2. वाक्यपदीय - भर्तृहरि
3. A Course in Modern Linguistics - C.E.Hockett
4. Introductory Linguistics - Hall
5. भाषा विज्ञान - डॉ. हरीश शर्मा
6. भाषा विज्ञान एवं भाषा शास्त्र - डॉ.कपिलदेव द्विवेदी
7. भाषा विज्ञान और हिन्दी - डॉ.सरयू प्रसाद अग्रवाल
8. भाषा विज्ञान के सिद्धांत - श्री शिव नारायण
9. भाषा विज्ञान - डॉ.भोलानाथ तिवारी
10. भाषा रहस्य - डॉ.श्यामसुदर दास
11. भाषा विज्ञान की भूमिका - डॉ.देवेन्द्रनाथ शर्मा
12. सामान्य भाषा विज्ञान - डॉ.बाबूराम सक्सेना
13. भाषा विज्ञान और हिन्दी भाषा
14. हिन्दी भाषा विज्ञान परिचय - डॉ.ज्ञान राज काशीनाथ गायकवाड़

निबंध

1. भाषा की उत्पत्ति - डॉ.मिताली भट्टाचारजी

NOTES

NOTES

इकाई चार : विश्व की भाषाओं का वर्गीकरण एवं आकृतिमूलक वर्गीकरण

इकाई की रूपरेखा

4.0. प्रस्तावना

4.1. उद्देश्य

4.2. विश्व की भाषाओं की संख्या

4.3. वर्गीकरण के आधार : भाषागत साम्य एवं वैषम्य

4.3.1. संबंध तत्व गत साम्य के संबंध में डॉ.सरयू प्रसाद अग्रवाल के विचार

4.3.2. अर्थगत साम्य के संबंध में डॉ.मिताली भट्टाचारजी का मत

4.4. विश्व की भाषाओं के दो वर्ग

4.5. डॉ.भोलानाथ तिवारी द्वारा सूचित भाषा वर्गीकरण संबंधी आधार

4.6. आकृतिमूलक वर्गीकरण

4.6.1. योगात्मक व अयोगात्मक भाषाएँ

4.6.2. आयोगात्मक भाषाएँ

4.6.2.1. स्थान प्रधान शब्द

4.6.2.2. निपात-प्रधान भाषाएँ

4.6.2.3. सुर का प्रभाव

4.6.2.4. स्थान, निपात व सुर का प्राधान्य

4.6.2.5. सुर परिवर्तन से अर्थ परिवर्तन

4.7. योगात्मक अथवा प्रत्यय प्रधान भाषाएँ

4.7.1. योगात्मक भाषाओं का वर्गीकरण

4.7.1.1. अश्लिष्ट योगात्मक भाषाएँ

4.7.1.2. अश्लिष्ट योगात्मक भाषाओं के उपभेद

4.7.1.3. पूर्व योगात्मक अश्लिष्ट भाषाएँ

4.7.1.4. मध्य योगात्मक अश्लिष्ट भाषाएँ

4.7.1.5. पूर्वान्त योगात्मक अश्लिष्ट भाषाएँ

4.7.1.6. अन्तयोगात्मक अश्लिष्ट भाषाएँ

4.7.1.7. आंशिक योगात्मक अश्लिष्ट भाषाएँ

4.8. श्लिष्ट योगात्मक भाषाएँ

4.8.1. श्लिष्ट योगात्मक भाषाओं के उपभेद

4.8.1.1. अन्तर्मुखी श्लिष्ट योगात्मक भाषाएँ

4.8.1.2. अन्तर्मुखी श्लिष्ट योगात्मक भाषाओं के उपभेद

4.8.1.2.1. संयोगात्मक अंतर्मुखी योगात्मक भाषाएँ

4.8.1.2.2. वियोगात्मक अंतर्मुखी भाषाएँ

4.8.1.2.3. बहिर्मुखी श्लिष्ट योगात्मक भाषाएँ

4.8.1.2.4. बहिर्मुखी श्लिष्ट योगात्मक भाषाओं के उपभेद

4.8.1.2.5. संयोगात्मक बहिर्मुखी श्लिट भाषाएँ

4.8.1.2.6. वियोगात्मक बहिर्मुखी श्लिष्ट योगात्मक भाषाएँ

4.8.1.2.7. प्रश्लिष्ट योगात्मंक भाषाएँ

4.8.1.2.8. आंशिक प्रश्लिष्ट योगात्मक भाषाएँ

4.9. आकृतिमूलक वर्गीकरण की उपयोगिता

4.10. निष्कर्ष

4.11. सारांश

4.12. बोध प्रश्न

4.13. उत्तर के अंश अभ्यास के प्रश्नों के संबंध में

4.14. शब्दावली

4.15. संदर्भ ग्रंथ एवं निबंध

4.0. प्रस्तावना

विश्व में बोली जानेवाली भाषाओं की संख्या लगभग तीन हज़ार मानी गयी है तथा कुछ विद्वान उनकी संख्या 2796 निर्धारित करते हैं। परन्तु इस कथित संख्या का कोई ठोस सबूत नहीं है और यह निश्चित करना अत्यंत कठिन भी है । निरन्तर परिवर्तनशील भाषओं को किसी विशिष्ट रूप, देश, काल, स्थान, जाति अथवा वर्ग के बंधन में पूरी तरह से नहीं बाँध पाते । फिर भी यह विचित्र संयोग है कि इतने वैभिन्य के होने पर भी इनमें अनेक साम्य तत्व पाये जाते हैं । भाषाशास्त्रियों ने वर्गीकरण के निम्नलिखित दो प्रकार के **साम्य तत्वों** का उल्लेख किया है -

1. संबंधगत, पदरचना संबंधी समता
2. अर्थगत समता ।

दो प्रमुख वर्ग

उपर्युक्त आधारों तथा अन्य सिद्धान्तों के समन्वय से भाषा वैज्ञानिक संसार की समस्त भाषाओं को दो वर्गों में विभाजित करते हैं-

1. आकृतिमूलक वर्गीकरण
2. पारिवारिक वर्गीकरण ।

डॉ.भोलानाथ तिवारी ने वर्गीकरण के निम्न सूचित आधार बताये हैं-

1. महाद्वीप के आधार पर, जैसे - एशियायी भाषाएँ, यूरोपीय भाषाएँ आदि
2. देश के आधार पर, यथा-भारतीय, रूसी भाषाएँ
3. धर्म के आधार पर - हिन्दू भाषाएँ, ईसाई भाषाएँ
4. काल के आधार पर - मध्यकालीन भाषाएँ, अधुनातन भाषाएँ
5. भाषाओं की आकृति के आधार पर - अयोगात्मक और योगात्मक भाषाएँ

6. परिवार के आधार पर, यथा - भारोपीय, एकाक्षर भाषाएँ
7. प्रभाव के आधार पर, यथा - अरबी प्रभावित भाषाएँ
संस्कृत प्रभावित भाषाएँ ।

उपर्युक्त आधारों में दो आधार विश्व में सर्वत्र मान्य हैं वे हैं -

1. आकृति मूलक सिद्धान्त
2. पारिवारिक सिद्धान्त ।

प्रस्तुत घटक में आकृतिमूलक वर्गीकरण का परिचय दिया जा रहा है । इस पाठ में 'भाषा विज्ञान और हिन्दी भाषा' ग्रंथ से कई अंश व उदाहरण उद्धृत किये जा रहे हैं ।

4.1. उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई में पाठकों को विश्व की समस्त भाषाओं के वर्गीकरण के आधारों से संबंधित विवरण से अवगत कराया जा रहा है । भाषा शास्त्रियों ने विभिन्न भाषाओं में दो प्रकार की समता बताई है -

(i) संबधगत/पद रचना संबंधी समता
(ii) अर्थगत समता ।

संबंधगत एवं अर्थगत साम्य के आधार पर ही विशेषज्ञों ने भाषाओं को दो प्रमुख वर्गों में विभाजित किया है, जैसे -

(i) आकृतिमूलक वर्गीकरण
(ii) पारिवारिक वर्गीकरण ।

डॉ. भोलानाथ तिवारी ने फिर से कई आधारों पर इनका विभाजन किया है, यथा - महाद्वीप के आधार पर, देश के आधार पर, धर्म व काल के आधार पर, भाषाओं की आकृति के आधार पर, परिवार एवं प्रभाव के आधार पर आदि ।

आकृतिमूलक भाषाओं को दो प्रमुख विभागों में विभाजित किया गया है -

आकृतिमूलक वर्गीकरण

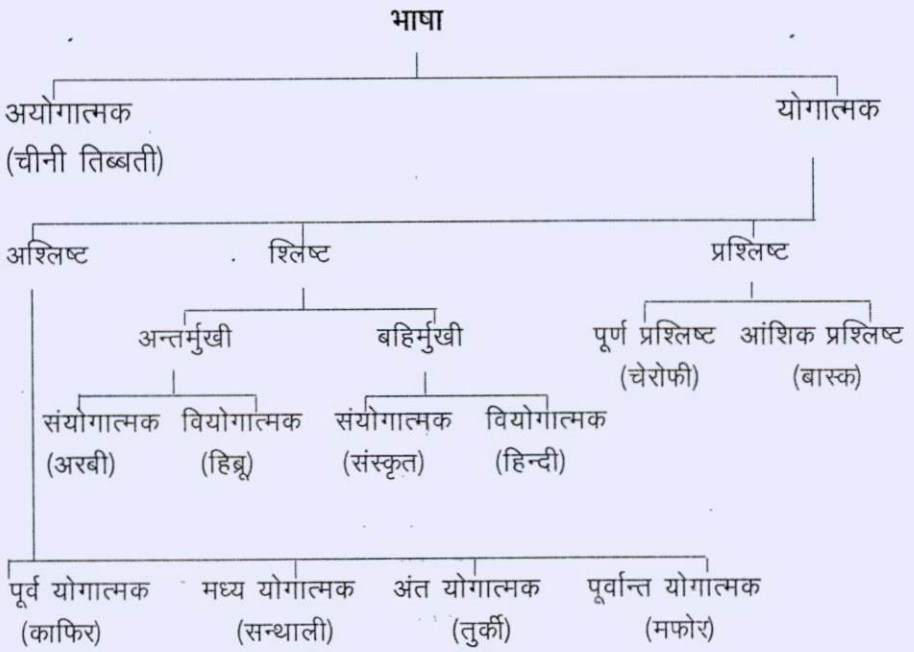

प्रस्तुत घटक में संसार की भाषाओं के वर्गीकरण के प्रमुख आधारों का विवेचन करते हुए आकृतिमूलक वर्गीकरण के अंतर्गत आनेवाली भाषाओं के उपवर्गों का परिचय दिया जा रहा है । संसार की भाषाओं के विभिन्न वर्गों की विशेषताओं से पाठकों को अवगत कराना प्रस्तुत घटक का उद्देश्य है ।

4.2. विश्व की भाषाओं की संख्या

विश्व के विभिन्न भागों में असंख्य भाषाएँ बोली जाती हैं। भाषाओं की संख्या अनंत है । कतिपय विद्वानों के अनुसार उनकी संख्या तीन हज़ार है तथा कुछ विद्वान उनकी संख्या 2796 मानते हैं । ये दोनों मत अनुमान मात्र हैं । निरन्तर परिवर्तनशील भाषाएँ रूप, देश, काल, स्थान, जाति अथवा वर्ग किसी भी बंधन में पूरी तरह से नहीं बंध पातीं । वैभिन्य के होते हुए भी विश्व की अनेक भाषाओं में साम्य भी दृग्गोचर होता है ।

4.3. वर्गीकरण के आधार

भाषागत साम्य एवं वैषम्य

भाषागत साम्य एवं वैषम्य को दृष्टि में रखकर भाषा वैज्ञानिकों ने संसार की भाषाओं का वर्गीकरण किया है । विभिन्न भाषाओं में दो प्रकार की समता देखने में आती है -

1. संबंधगत या पद रचना संबंधी साम्य एवं
2. अर्थगत साम्य ।

4.3.1. संबंध तत्व गत साम्य के संबंध में डॉ.सरयू प्रसाद अग्रवाल के विचार

डॉ.सरयू प्रसाद अग्रवाल के शब्दों में संसार की अनेक भाषाओं में संबंध तत्व संबंधी अथवा पद रचना संबंधी समानता दिखलाई देती है, जैसे - आओ, जाओ, गाओ आदि में क्रियाओं में 'ओ' की समानता पाई जाती है, यद्यपि उनमें अर्थ संबंधी कोई साम्य नहीं है, सब में 'ओ' की समानता है ।

4.3.2. अर्थगत साम्य के संबंध में डॉ.मिताली भट्टाचारजी का मत

डॉ.मिताली भट्टचारजी के अनुसार विश्व की कई भाषाओं में पद रचना संबंधी साम्य न होने पर भी अर्थगत साम्य दृग्गोचर होता है । उदाहरण के लिए . आना, आया, आयेंगे, आऊँगा आदि शब्दों में संबंधगत समानता के न होने पर भी अर्थ संबंधी साम्य है, क्योंकि ये सभी शब्द आना क्रिया के ही विविध रूप हैं ।

4.4. विश्व की भाषाओं के दो वर्ग

उपर्युक्त दोनों आधार ही विश्व की भाषाओं के वर्गीकरण के प्रमुख आधार हैं । इन सिद्धांतों के आधार पर संसार की भाषाओं को दो वर्गों में विभक्त किया जा सकता है ।

4.5. डॉ.भोलानाथ तिवारी द्वारा उल्लिखित भाषा वर्गीकरण के आधार

डॉ.भोलानाथ तिवारी द्वारा उल्लिखित भाषा वर्गीकरण के आधार वे हैं -

1. महाद्वीप के आधार
   यथा - एशियाई, यूरोपीय, अफ्रीका तथा अमरीकी भाषाएँ
2. देश के आधार पर,
   जैसे - चीनी, भारतीय, रूसी भाषाएँ
3. धर्म के आधार पर,
   जैसे - हिन्दू भाषाएँ, मुस्लिम भाषाएँ, ईसाई भाषाएँ
4. काल के आधार पर, जैसे - प्रागैतिहासिक, प्राचीन एवं आधुनिक भाषाएँ
5. भाषाओं की आकृति के आधार पर, जैसे - अयोगात्मक तथा योगात्मक भाषाएँ
6. परिवार के आधार पर, जैसे - भारोपीय, एकाक्षर, द्राविड, हेमेटिक, सेमिटिक भाषाएँ,
7. प्रभाव के आधार पर, जैसे - संस्कृत प्रभावित भाषाएँ, अंग्रेजी प्रभावित भाषाएँ आदि ।

ये सातों आधार भाषा वर्गीकरण में विशेष महत्वपूर्ण नहीं हैं। इनमें केवल निम्नसूचित दो ही सिद्धांत उपयुक्त और सर्व मान्य हैं -

1. आकृतिमूलक सिद्धांत एवं
2. पारिवारिक सिद्धांत ।

4.6. आकृतिमूलक वर्गीकरण

'भाषा विज्ञान एवं हिन्दी भाषा' ग्रन्थ में उल्लिखित है कि भाषाओं के आकृतिमूलक वर्गीकरण को पदात्मक व वाक्यात्मक वर्गीकरण भी कहते हैं । इस वर्गीकरण का मुख्य आधार विभिन्न भाषाओं में निहित संबंध तत्व, प्रत्यय, अथवा विभिन्न पद - रचना

एवं वाक्य रचना संबंधी साम्य है । जिन भाषाओं में इस प्रकार की समानता पाई जाती है, उनका एक वर्ग माना जाता है । इस वर्ग को आकृतिमूलक वर्ग नाम दिया जाता है । इस वर्ग की सभी भाषाओं में पदों या वाक्यों की रचना एक ही ढंग से होती है ।

4.6.1. योगात्मक व अयोगात्मक भाषाएँ

आकृतिमूलक वर्गीकरण के अंतर्गत दो प्रकार की भाषाएँ आती हैं -

1. अयोगात्मक भाषाएँ तथा
2. योगात्मक भाषाएँ ।

4.6.2. आयोगात्मक भाषाएँ

अयोगात्मक वर्ग की भाषाओं के अन्य नाम हैं -
निपात - प्रधान भाषाएँ, स्थान प्रधान भाषाएँ, धातु -प्रधान भाषाएँ । इस प्रकार की भाषाओं में प्रत्येक शब्द स्वतंत्र होता है । शब्दों में प्रत्यय, विभक्ति, उपसर्ग या परसर्ग के योग से कोई संबंधगत अथवा अर्थगत अन्तर नहीं आता ।

4.6.2.1. स्थान प्रधान शब्द

वाक्य में एक ही शब्द स्थान विशेष पर प्रयुक्त होने पर कर्ता, कर्म, संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण या क्रिया शब्द बन जाता है । उसमें योगात्मक भाषाओं की भाँति किसी अन्य संबंध तत्व को जोड़ने की आवश्यकता नहीं होती । चीनी, तिब्बती, स्यामी वर्गों तथा मलय की भाषाएँ अयोगात्मक भाषाओं के अंतर्गत आती हैं । चीनी भाषा उसका सर्वश्रेष्ठ उदाहरण है ।

भाषा-विज्ञान और हिन्दी भाषा ग्रन्थ में चीनी भाषा के निम्न सूचित उदाहरण दिये गये हैं -

1. न्गो त नि - मैं मारता हूँ तुमको ।
   नि त न्गो - तुम मारते हो मुझको ।

2. ता लेन - बड़ा आदमी ।
लेन ता - आदमी बड़ा ।

उपर्युक्त उदाहरणों में वही शब्द स्थान-परिवर्तन से कर्त्ता, कर्म आदि हो गया है । वाक्य में शब्दों का परस्पर संबंध किसी प्रकार के संबंध तत्व याने कारक, उपसर्ग आदि से निश्चित नहीं हुआ है । इसलिए इस प्रकार की भाषाओं को स्थान प्रधान या एकाक्षरी भाषाएँ कहते हैं ।

4.6.2.2. निपात-प्रधान भाषाएँ

डॉ.अग्रवाल के शब्दों में

कुछ अयोगात्मक भाषाओं में स्थान के अतिरिक्त निपात तथा सुर की सहायता से भी शब्दों का निर्माण किया जाता है । चीनी भाषा में निपात का प्रयोग बहुधा होता है, जैसे -

चु - भाववाचक निपात
हाउ - अच्छा
हाउचु - अच्छाई
ती - संबंध कारक निपात
वो - मैं ।

4.6.2.3. सुर का प्रभाव

डॉ.सरयू प्रसाद अग्रवाल के अनुसार

अयोगात्मक भाषाओं में सुर के उतार-चढ़ाव से शब्द के अर्थ में अंतर आ जाता है । मणिपुरी भाषा में यह प्रकृति दृष्टिगत होती है, जैसे -

मा - ह्रस्व स्वर - वह
मा - दीर्घ स्वर - माता

स्थान, निपात तथा सुर की यह विशेषता कतिपय अयोगात्मक भाषाओं में दृग्गोचर होती है ।

4.6.2.4. स्थान, निपात व सुर का प्राधान्य

डॉ.मिताली भट्टाचारजी के विचार

डॉ.मिताली भट्टाचारजी के शब्दों में आफ्रिका परिवार की सूडानी भाषा स्थान-प्रधान है । तिब्बती भाषा में निपात का प्राधान्य होता है । मणिपुरी एवं स्यामी में सुर का प्राधान्य है । चीनी भाषा में स्थान और सुर दोनों की प्रधानता पाई जाती है ।

अयोगात्मक परिवार की ये विशेषताएँ भारोपीय परिवार की अनेक भाषाओं में भी दृष्टिगत होती हैं, यथा-हिन्दी, अंग्रेजी आदि । ''जाता है'' यह एक शब्द ही कर्ता और क्रिया हो जाता है ।

4.6.2.5. सुर परिवर्तन से अर्थ परिवर्तन

''भाषा-विज्ञान एवं हिन्दी भाषा'' ग्रन्थ में लिखा गया है कि संस्कृत में सुर या ध्वनि परिवर्तन से अर्थ में परिवर्तन आ जाता है । वैदिक संस्कृत में सुर का बहुत अधिक महत्व है, जैसे -

हरि	- एक वचन	कवि	- एक वचन
हरी	- द्विवचन	कवी	- द्विवचन ।

4.7. योगात्मक अथवा प्रत्यय प्रधान भाषाएँ

योगात्मक भाषाओं में संबंध तत्व, प्रत्यय, विभक्ति, परसर्ग आदि में तथा अर्थ तत्व, प्रकृति धातु आदि में परस्पर योग रहता है । विशेष रूप से भारोपीय परिवार की भाषाएँ इसके श्रेष्ठ उदाहरण हैं ।

4.7.1. योगात्मक भाषाओं का वर्गीकरण

''भाषा विज्ञान व हिन्दी भाषा'' ग्रन्थ के अनुसर प्रत्यय आदि संबंध तत्व के योग के आधार पर योगात्मक भाषाओं के तीन भेद किये जाते हैं -

1. अश्लिष्ट योगात्मक भाषाएँ
2. श्लिष्ट योगात्मक भाषाएँ
3. प्रश्लिष्ट योगात्मक भाषाएँ ।

4.7.1.1. अश्लिष्ट योगात्मक भाषाएँ

अश्लिष्ट योगात्मक भाषाओं में अर्थ तत्व अर्थात् प्रकृति तथा संबंध तत्व में परस्पर योग होने पर भी ये दोनों पृथक्-पृथक् होते हैं । तुर्की भाषा अश्लिष्ट योगात्मक उपभेद की प्रतिनिधि भाषा है । उदाहरण के लिए तुर्की में 'सेवा का अर्थ है 'प्यार' । इसमें प्रत्यय जोड़ने से अनेक शब्द बनते हैं -

सेव - प्यार
सेवमेक - प्यार करना
सेव-इस-मेक - परस्पर प्यार करना
सेवा दिर् मेक - प्यार करवाना
सेम-इल-मेक - प्यार किया जाना ।

यद्यपि हिन्दी इस वर्ग की भाषा नहीं है, किन्तु उसमें अश्लिष्ट योगात्मकता के अनेक उदाहरण मिलते हैं -

शिशुत्व - शिशु + त्व
जनता - जन + ता
मैंने - मैं + ने
तुमको - तुम + को ।

4.7.1.2. अश्लिष्ट योगात्मक भाषाओं के उपभेद : डॉ.सरयू प्रसाद एवं डॉ.मिताली का वर्गीकरण

डॉ.सरयू प्रसाद एवं डॉ.मितालीजी संबंध तत्व के योग की दृष्टि से योगात्मक के पाँच उपभेदों का उल्लेख करते हैं -

1. पूर्व योगात्मकता
2. मध्य योगात्मकता
3. पूर्वान्त योगात्मकता

4. अन्त योगात्मक
5. आंशिक योगात्मक ।

4.7.1.3. पूर्व योगात्मक अश्लिष्ट भाषाएँ

पूर्व योगात्मक अश्लिष्ट भाषाओं में संबंध तत्व शब्द के प्रारंभ में उपसर्ग की तरह जुड़ जाता है । इसलिए इसको पूर्व योगात्मक अथवा पुरः प्रत्यय-प्रधान कहते हैं । आफ्रिका के 'बाण्टू' परिवार की भाषाएँ इसके श्रेष्ठ उदाहरण हैं । बाण्टू परिवार की ''जुलू'' भाषा के कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं -

उमु - एक वचन का चिह्न
अव - बहुवचन का चिह्न
किन्तु - आदमी
उमन्तु - एक आदमी
अवन्तु - बहुत से आदमी ।

('भाषा विज्ञान और हिन्दी भाषा' से गृहीत)

उपर्युक्त उदाहरण में 'न्तु' के साथ 'उमु तथा अव' का योग प्रारंभ में उपसर्ग की तरह हुआ है ।

4.7.1.4. मध्य योगात्मक अश्लिष्ट भाषाएँ

मध्य योगात्मक अश्लिष्ट भाषाओं में संबंध तत्व अर्थ तत्व के मध्य भाग में जुड़ता है । हिन्दू महासागर तथा मैडागास्कर के द्वीपों में बोली जानेवाली भाषाएँ मध्य योगात्मक ही अधिक हैं । मुण्डा मूल की भाषा के कुछ उदाहरण दिये जा रहे हैं -

1. मंझि - मुखिया
   प - बहुवचन का चिह्न
   मपंझि - मुखिया लोग ।

2. दल - मारना
   प - परस्पर
   दपल - परस्पर मारना ।

4.7.1.5. पूर्वान्त योगात्मक अश्लिष्ट भाषाएँ

पूर्वान्त योगात्मक अश्लिष्ट भाषाओं में संबंध तत्व पूर्व तथा अंत में जुड़ता है । प्रशांत महासागर तथा हिन्द महासागर के द्वीपों से पश्चिम में मैडागास्कर तक फैले द्वीपों में बोली जाने वाली अनेक भाषाएँ अन्त योगात्मक हैं । इनमें न्यूरिनी की मकोर भाषा के कुछ उदाहरण ये हैं -

म्नफ - सुनता हूँ
म म्नफ - मैं सुनता हूँ
ज म्नफ उ - मैं तुम्हारी बात सुनता हूँ ।

4.7.1.6. अन्तयोगात्मक अश्लिष्ट भाषाएँ

अंत योगात्मक अश्लिष्ट भाषाओं में संबंध तत्व अर्थ तत्व के केवल अंत में जुड़ता है । यूराल अल्ताई तथा द्राविडपरिवार की भाषाएँ इस वर्ग की हैं । कन्नड में सेवक शब्द के अंत में विविध संबंध तत्वों के जुड़ने से अनेक शब्द बनते हैं -

सेवक - रू - कर्ता कारक
सेवक - रन्नु - कर्म कारक
सेवक - रिन्द - करण कारक ।

4.7.1.7. आंशिक योगात्मक अश्लिष्ट भाषाएँ

''भाषा विज्ञान और हिन्दी भाषा'' ग्रन्थ में उल्लिखत है कि इस वर्ग की भाषाएँ योगात्मक तथा अयोगात्मक दोनों प्रकार की भाषाओं के बीच की होती हैं । उनमें योगात्मक तथा अयोगात्मक दोनों प्रकार की प्रवृत्तियाँ दृष्टिगत होती हैं । कभी उनमें संबंध तत्व का योग होता है और कभी नहीं होता ।

पालिनेशियन वर्ग की भाषाएँ इसी वर्ग में आती हैं । पानिनेशियन के अतिरिक्त जापानी, काकेशियन तथा बास्क भाषाएँ भी इसी वर्ग के अंतर्गत आती हैं ।

4.8. श्लिष्ट योगात्मक भाषाएँ

श्लिष्ट योगात्मक भाषाओं में संबंध तत्व के योग से अर्थतत्व में विकार आ जाता है । इन भाषाओं को विभक्ति-प्रधान भाषाएँ भी कहते हैं, क्योंकि इन भाषाओं में प्रायः संबंध तत्व विभक्ति के रूप में प्रयुक्त होता है । इनमें संबंधतत्व का योग स्पष्टतः दृष्टिगत होता है । संस्कृत इस वर्ग की प्रमुख भाषा है । संस्कृत भाषा के कुछ उदाहरण ये हैं -

वेद, भूगोल, इतिहास, समाज नीति, इह व इच्छा शब्दों में ठक् (इक) संबंध तत्व अर्थात् प्रत्यय का योग होने पर क्रमशः वैदिक, भौगोलिक ऐतिहासिक, सामाजिक, नैतिक, ऐहिक व ऐच्छिक शब्द बनते हैं ।

4.8.1. श्लिष्ट योगात्मक भाषाओं के उपभेद

संबंध तत्व के योग की दृष्टि से श्लिष्ट योगात्मक भाषाओं के दो उपभेद किये जाते हैं -

(क) अन्तर्मुखी श्लिष्ट योगात्मक

(ख) बहिर्मुखी श्लिष्ट योगात्मक ।

4.8.1.1. अन्तर्मुखी श्लिष्ट योगात्मक भाषाएँ

अंतर्मुखी श्लिष्ट योगात्मक भाषाओं का विवेचन डॉ.मितालीजी, प्रो.बी.जी.चन्द्रलेखा, डॉ.सरयू प्रसाद आदि ने समान रूप से किया है ।

अन्तर्मुखी श्लिष्ट योगात्मक भाषाओं में संबंधतत्व और अर्थ तत्व परस्पर एक दूसरे में अभिन्न रूप से जुड़े रहते हैं । सेमेटिक परिवार की भाषाएँ इसी वर्ग की हैं । अरबी भाषा में यह प्रवृत्ति बहुत अधिक दृष्टिगत होती है ।

उदाहरण के लिए अरबी भाषा को कृत् ल माद्दा (धातु) में संबंध तत्व अ, इ, उ आदि के योग से अनेक शब्द बनते हैं -

कतल - उसने मारा'
कातिल - मारने वाला
यकेहुल - वह मारता है
कुतिल - वह मारा गया
कितल - शत्रु

4.8.1.2. अन्तर्मुखी श्लिष्ट योगात्मक भाषाओं के उपभेद

अन्तर्मुखी श्लिष्ट योगात्मक भाषाओं के दो उपभेद होते हैं -

1. संयोगात्मक
2. वियोगात्मक ।

4.8.1.2.1. संयोगात्मक अंतर्मुखी योगात्मक भाषाएँ

प्राचीन अरबी आदि सेमेटिक परिवार की भाषाएँ इस वर्ग में आती हैं । इस प्रकार की भाषाओं में अलग से संबंध तत्व नहीं जोड़ा जाता है ।

4.8.1.2.2. वियोगात्मक अन्तमुखी भाषाएँ

सेमेटिक परिवार की भाषाएँ वियोगात्मक हो गई हैं । अब उनमें संबंध तत्व के योग की प्रवृत्ति दिखलाई पड़ती है । उदाहरण के लिए आधुनिक हीब्रू में वाक्य मं विभिन्न शब्दों का अर्थ उनके स्थान या स्थिति पर अधिक निर्भर रहता है ।

4.8.1.2.3. बहिर्मुखी श्लिष्ट योगात्मक भाषाएँ

बहिर्मुखी श्लिष्ट योगात्मक भाषाओं में संबंधतत्व परसर्ग के रूप में बाहर से या बाद में जुड़ता है । भारत यूरोपीय परिवार की अधिकांश भाषाओं में यह प्रवृत्ति बहुत अधिक दृष्टिगत होती है । संस्कृत इसका श्रेष्ठ उदाहरण है -

पठ् + ति - पठति (पढ़ता है)
पठ् + तः - पठतः (दो पढ़ते हैं)
पठ् + न्ति - पठन्ति (बहुत से पढ़ते हैं)

4.8.1.2.4. बहिर्मुखी श्लिष्ट योगात्मक भाषाओं के उपभेद

बहिर्मुखी श्लिष्ट योगात्मक भाषाओं के भी दो उपभेद हैं -

1. संयोगात्मक एवं
2. वियोगात्मक ।

4.8.1.2.5. संयोगात्मक बहिर्मुखी श्लिष्ट भाषाएँ

इन भाषाओं में संबंधतत्व शब्दों में ही जुड़ जाता है । पृथक् से परसर्ग या सहायक क्रिया आदि का प्रयोग नहीं किया जाता । संस्कृत, ग्रीक, लैटिन तथा अवेस्ता इसी वर्ग की प्रतिनिधि भाषाएँ हैं । संस्कृत से कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं -

सः पठति - वह पढ़ता है

त्वम् क्रीडसि - तुम खेलते हो ।

4.8.1.2.6. वियोगात्मक बहिर्मुखी श्लिष्ट योगात्मक भाषाएँ

संयोगात्मकता से वियोगात्मकता की ओर अग्रसर होने की प्रवृत्ति के कारण भारत यूरोपीय परिवार की अनेक भाषाएँ वियोगात्मक हो गई हैं । इनमें विभक्ति, परसर्ग आदि का लोप होने के कारण पृथक् से परसर्ग, सहायक क्रियाओं आदि का प्रयोग होने लगा है । हिन्दी, बंगला, अंग्रेजी आदि भाषाएँ इसके उदाहरण हैं ।

4.8.1.2.7. प्रश्लिष्ट योगात्मक भाषाएँ

प्रश्लिष्ट योगात्मक भाषाओं में अर्थ तत्व और संबंध तत्व परस्पर इस प्रकार जुड़े रहते हैं कि उनको पृथक् नहीं किया जा सकता है । ये समास-प्रधान भाषाएँ कहलाती हैं । योग की दृष्टि से इनके दो उपभेद किये जाते हैं -

(क) पूर्ण प्रश्लिष्ट योगात्मक भाषाएँ

इस वर्ग की भाषाओं में अर्थ तत्व, संबंध तत्व तथा समस्त

व्याकरणिक कोटियाँ एक दूसरे में पूरी तरह घुल मिल जाती हैं । यह योग इतना अधिक होता है कि पूर्ण वाक्य एक ही शब्द बन जाता है । ग्रीनलैंड की भाषा में इसके उदाहरण मिलते हैं -

अउलिसर - मछली मारना
पेआतंरि - किसी काम में लगा होना
पेन्नुसुअर्पोक - वह जल्दी करता है ।

उत्तरी अमेरिकन चेरीको भाषा का वाक्य है -
नधोनिलिनिन - हमारे लिए एक नाव लाओ ।

यह वाक्य तीन शब्दों के योग से बना है -
नेतन - लाना
अमोरवल - नाव
निन - हम ।

4.8.1.2.8. आंशिक प्रश्लिष्ट योगात्मक भाषाएँ

प्रायः प्रश्लिष्ट भाषाओं में कर्त्ता, कर्म, क्रिया आदि व्याकरणिक कोटियाँ एक ही वाक्य में समाहित हो जाती हैं । किन्तु कुछ ऐसी प्रश्लिष्ट भाषाएँ हैं, जिनमें स्वतंत्र शब्दों तथा स्वतंत्र वाक्य रचना का विकास हो गया है । इनमें प्रायः सर्वनाम तथा क्रिया का ऐसा मिश्रण हो जाता है कि क्रिया का पृथक् से कोई अस्तित्व नहीं रह जाता । सर्वनाम से ही क्रिया का कार्य ले लिया जाता है । बास्क भाषा इस वर्ग का श्रेष्ठ उदाहरण है -

दकारकिओत - मैं उसके पास ले जाता हूँ ।
नकारसु - तुम मुझको ले जाते हो ।
इकारत - मैं तुमको ले जाता हूँ ।

बाण्टू में भी सर्वनाम और क्रिया के सम्मिश्रण के उदाहरण मिलते हैं ।

भारोपीय परिवार की कुछ भाषाएँ संस्कृत अंग्रेज़ी, फ्रेंच, गुजराती तथा बंगाल में इस प्रकार के उदाहरण दृष्टिगत होते हैं । संस्कृत से कुछ उदाहरण ये हैं -

जिगमिषति - वह जाना चाहता है ।
कवयामि - (मैं) कविता करता हूँ ।
यामि - (मैं) जाता हूँ ।

आकृतिमूलक वर्गीकरण की तालिका

आकृतिमूलक या रूपात्मक वर्गीकरण की तालिका

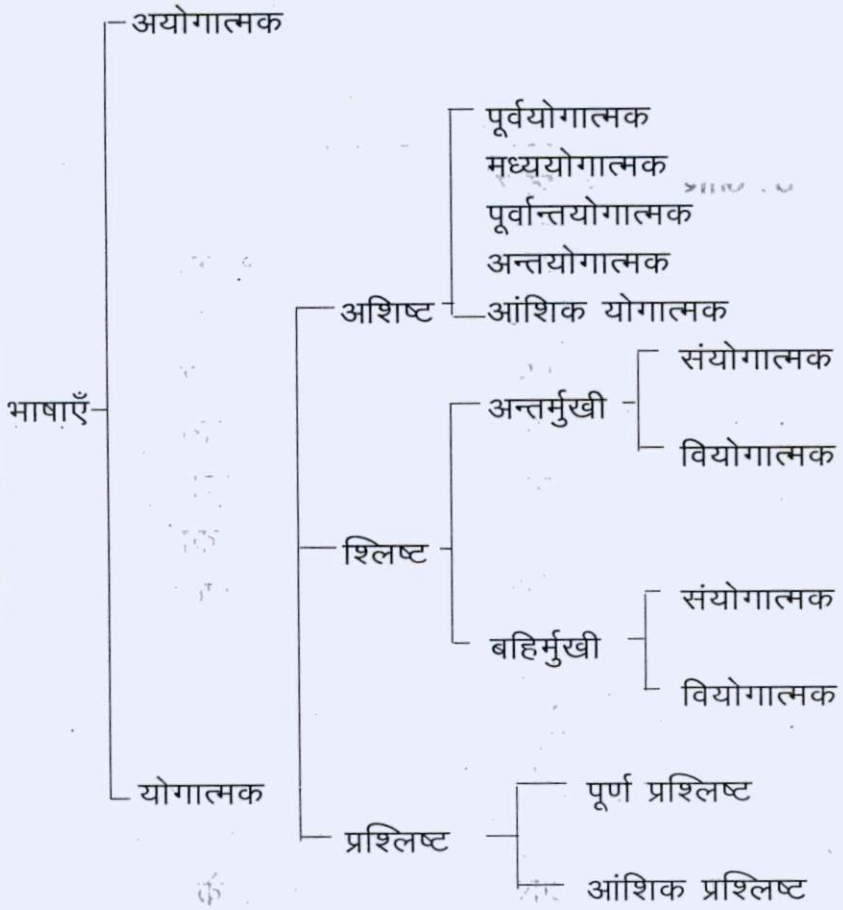

4.9. आकृतिमूलक वर्गीकरण की उपयोगिता

भाषावैज्ञानिक आकृतिमूलक वर्गीकरण को उपयोगी नहीं मानते । उनका मत है कि इस वर्गीकरण द्वारा संसार की समस्त भाषाओं का ठीक प्रकार से वर्गीकरण करने में कोई विशेष सहायता नहीं मिलती ।

1. इस वर्गीकरण के अंतर्गत अश्लिष्ट कही जानेवाली तुर्की, कन्नड, काफिर आदि भाषाओं में प्रश्लिष्ट भाषाओं के लक्षण भी देखने में आते हैं । अतएव आकृतिमूलक वर्गीकरण को पूर्णतः वैज्ञानिक नहीं कहा जा सकता ।

2. आकृतिमूलक वर्गीकरण के अंतर्गत विश्व की समस्त भाषाओं को मुख्य रूप में दो वर्गों में विभक्त किया जाता है -
अयोगात्मक तथा योगात्मक ।
वस्तुतः इनके कई वर्ग हो सकते हैं ।

4.10. निष्कर्ष

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि भाषाविदों ने संसार की समस्त भाषाओं को विभिन्न आधारों पर वर्गीकृत किया है । इन भाषाओं में अनेकानेक विभिन्नताएँ विद्यमान हैं, तथापि कुछ न कुछ साम्य तत्व उनमें अवश्य पाया गया है, जिसके आधार पर भाषा शास्त्रियों ने उन्हें एक वर्ग में ले लाने का सुप्रयत्न किया है । प्रमुखतः उन भाषाओं को संबंधगत एवं अर्थगत आधारों पर विभाजित किया गया है ।

अर्थगत आधार एवं संबंधगत आधार के अतिरिक्त आकृतिमूलक एवं पारिवारिक वर्गीकरण भी किया गया है । डॉ.भोलानाथ तिवारी ने फिर से कई तथ्यों के आधार यथा - महाद्वीप, देश, काल, धर्म, परिवार प्रभाव आदि के अलावा भाषाओं को उनकी आकृति के आधार पर भी विभाजित किया है ।

भाषाविदों के द्वारा यह निर्धारित किया गया है कि संसार में कुल 2796 भाषाएँ हैं । इन भाषाओं में कई उपभाषाएँ एवं बोलियाँ सम्मिलित नहीं हैं ।

कहा जा सकता है कि आकृतिमूलक एवं पारिवारिक वर्गीकरण अंशतः वैज्ञानिक हैं । प्रस्तुत घटक में आकृति मूलक वर्गीकरण के विभिन्न उपवर्गों का परिचय दिया गया है ।

4.11. सारांश

यह कहा जा सकता है कि संसार में पायी जानेवाली 2796 भाषाओं को किसी न किसी साम्य तत्व के आधार पर वर्गीकृत करने का प्रयास किया गया है । प्रमुखतः उनको संबंध तत्वगत एवं अर्थगत आधार पर विभाजित किया गया है । इन्हीं तत्वों के आधार पर दो वर्गों में भाषाओं को वर्गीकृत किया गया है, यथा - आकृतिमूलक वर्गीकरण

पारिवारिक वर्गीकरण ।

इनकी उपयोगिता पर प्रकाश डालते हुए आलोचकों ने समीक्षा भी प्रस्तुत की है । इससे इन भाषाओं के रूप, प्रवृत्तियाँ, प्रकृति, स्वभाव, व्याकरण आदि का ज्ञान हासिल कर सकते हैं । साथ ही आलोचकों ने कुछ न्यूनताएँ एवं कमियाँ भी बतायी हैं, यथा-संसार की समस्त भाषाओं का अब तक पूर्ण अध्ययन नहीं हुआ है । अतः यह वर्गीकरण अस्पष्ट एवं अपूर्ण है । कोई भाषा किसी वर्ग का पूर्ण प्रतिनिधित्व नहीं करती है । फिर इन सभी भाषाओं को विशिष्ट वर्ग में विभाजित करना कहाँ तक उचित है ? ऐसे प्रश्न जरूर भाषाविदों के मस्तिष्क में उभर आते हैं ।

विश्व में सर्वमान्य आकृतिमूलक तथा पारिवारिक वर्गीकरणों के अतिरिक्त निम्नसूचित अन्य आधारों का भी विवेचन प्रस्तुत घटक में किया गया है, यथा -

1. महाद्वीप के आधार
2. देश के आधार

3. धर्म के आधार
4. काल के आधार
5. प्रभाव के आधार ।

4.12. बोध प्रश्न

1. भाषाओं के वर्गीकरण के प्रमुख आधारों पर प्रकाश डालते हुए आकृतिमूलक वर्गीकरण का विवरण प्रस्तुत कीजिए ।
2. **टिप्पणी लिखिए**

(i) आकृतिमूलक वर्गीकरण के गुण - दोष ।

4.13. उत्तर के अंश अभ्यास के प्रश्नों के संबंध में

1. भाषाओं के वर्गीकरण के आधार एवं आकृतिमूलक वर्गीकरण का विवरण

विश्व की सभी भाषाओं को भाषाविदों ने संबंध तत्व व अर्थ तत्व के आधार पर दो वर्गों में विभाजित किया है -

i). आकृतिमूलक वर्गीकरण तथा
ii). पारिवारिक वर्गीकरण ।

आकृतिमूलक में अयोगात्मक एवं योगात्मक भाषाएँ आती हैं । अयोगात्मक में अश्लिष्ट, श्लिष्ट एवं प्रश्लिष्ट वर्ग आते हैं । पुनः अश्लिष्ट में पूर्ण योगात्मक, मध्य योगात्मक, अंत योगात्मक भेद आते हैं । श्लिष्ट में अंतर्मुखी एवं बहिर्मुखी भेद आते हैं । प्रश्लिष्ट में पूर्ण एवं आंशिक प्रश्लिष्ट आंते हैं । उत्तर में इन सब का विवेचन अपेक्षित है ।

भाषाओं के वर्गीकरण के आधार

डॉ.भोलानाथ तिवारी ने भाषाओं के वर्गीकरण के सात आधार माने हैं -

1. महाद्वीप के आधार पर, जैसे - आस्ट्रेलियन भाषाएँ
2. देश के आधार पर, जैसे - ईरानी, जापानी भाषाएँ
3. धर्म के आधार पर, जैसे - हिन्दू भाषाएँ, मुस्लिम भाषाएँ
4. काल के आधार पर, जैसे - प्राचीन भाषाएँ, मध्यकालीन भाषाएँ
5. भाषाओं की आकृति के आधार पर जैसे - योगात्मक भाषाएँ, अयोगेत्मक भाषाएँ
6. परिवार के आधार पर, यथा - द्रविड़ भाषाएँ, मुण्डा भाषाएँ
7. प्रभाव के आधार पर, जैसे - अंग्रेजी से प्रभावित भाषाएँ ।

इनमें प्रमुखतः सर्वमान्य वर्गीकरण ये हैं -

1. आकृतिमूलक वर्गीकरण
2. पारिवारिक वर्गीकरण ।

ये वर्गीकरण प्रमुखतः दो प्रकार की समताओं पर आधारित हैं -

1. संबंधगत या पदरचना संबंधी साम्य
2. अर्थगत साम्य ।

आकृतिमूलक वर्गीकरण के अन्य नाम हैं - पदात्मक वर्गीकरण और वाक्यात्मक वर्गीकरण । इसका मुख्य आधार विभिन्न भाषाओं में विद्यमान संबंध तत्व, प्रत्यय, पद रचना एवं वाक्य रचना संबंधी समता है । जिन भाषाओं में एतद्वत् समता पाई जाती है, उनको एक वर्ग में रखा जाता है ।

आकृतिमूलक वर्गीकरण के भेद

इसमें दो प्रकार की भाषाएँ आती हैं -

1. अयोगात्मक भाषाएँ
2. योगात्मक भाषाएँ ।

उपभेद

इनके उपभेद इस प्रकार हैं -

1. अयोगात्मक भाषाएँ

1. स्थान प्रधान भाषाएँ - चीनी एकाक्षरी भाषाएँ
2. निपात प्रधान भाषाएँ - चीनी
3. सुर प्रधान भाषाएँ - मणिपुरी ।

2. योगात्मक अथवा प्रत्यय प्रधान भाषाएँ

इनके तीन भेद हैं -

1. अश्लिष्ट योगात्मक भाषाएँ - तुर्की
2. श्लिष्ट योगात्मक भाषाएँ
3. प्रश्लिष्ट योगात्मक भाषाएँ ।

इस वर्ग के उपभेद ये हैं -

1. पूर्वयोगात्मक अश्लिष्ट - आफ्रिका के बाँटू परिवार की भाषाएँ
2. मध्ययोगात्मक अश्लिष्ट भाषाएँ - मुण्डा कुल की भाषाएँ
3. पूर्वांत योगात्मक अश्लिष्ट भाषाएँ - न्यूरिन की मकोर भाषा
4. अंत योगात्मक अश्लिष्ट भाषाएँ - द्रविड भाषाएँ, यूराल अलताई
5. आंशिक योगात्मक अश्लिष्ट भाषाएँ - पालिनेशियन वर्ग की भाषाएँ, जापानी, काकेशियन तथा बास्क भाषाएँ

3. श्लिष्ट योगात्मक भाषाएँ - संस्कृत

1. अंतर्मुखी श्लिष्ट योगात्मक भाषाएँ - सेमेटिक परिवार की भाषाएँ - अरबी
2. बहिर्मुखी श्लिष्ट योगात्मक भाषाएँ

1. **अंतर्मुखी श्लिष्ट योगात्मक भाषाओं के दो भेद हैं**

i. संयोगात्मक अंतर्मुखी श्लिष्ट योगात्मक भाषाएँ - सेमेटिक की प्राचीन अरबी ।

ii. वियोगात्मक अंतर्मुखी श्लिष्ट योगात्मक भाषाएँ - सेमटिक ।

2. **बहिर्मुखी श्लिष्ट योगात्मक भाषाएँ संस्कृत व भारोपीय परिवार की कतिपय भाषाएँ**

इसके तीन भेद हैं -

i. संयोगात्मक बहिर्मुखी श्लिष्ट योगात्मक भाषाएँ - उदाहरण संस्कृत, ग्रीक, लैटिन, अवेस्ता

ii. वियोगात्मक बहिर्मुखी श्लिष्ट योगात्मक भाषाएँ - भारोपीय - हिन्दी, बांगला, अंग्रेज़ी

iii. प्रश्लिष्ट योगात्मक भाषाएँ - ग्रीक, ग्रीनलैंड की भाषा ।

इसके दो भेद हैं

1. पूर्ण प्रश्लिष्ट योगात्मक भाषाएँ - ग्रीनलैंड की भाषा ।
2. आंशिक प्रश्लिष्ट योगात्मक भाषाएँ - बास्क भाषा, बाँटू आदि ।

उपर्युक्त विभिन्न उपभेदों की भाषाओं के उदाहरण अपेक्षित हैं ।

3. **आकृतिमूलक वर्गीकरण के गुण व दोष**

आकृतिमूलक वर्गीकरण के गुण निम्नलिखित हैं -

i. भाषाओं के स्वरूप का ज्ञान

ii. उनकी रचना का ज्ञान

iii. उनके व्याकरण का ज्ञान

iv. उनका तुलनात्मक ज्ञान

v. उनके स्वभाव एवं साम्य का ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं ।

आकृतिमूलक वर्गीकरण के दोष निम्नलिखित हैं -

i. कोई व्यावहारिक उपयोगिता नहीं है ।

ii. कुछ असंबद्ध भाषाएँ भी एक कोटि में बिठाई गई हैं ।

iii. कोई भाषा किसी वर्ग का पूर्ण प्रतिनिधित्व नहीं करती है ।

iv. विश्व की समस्त भाषाओं का अभी तक पूर्ण अध्ययन नहीं हो पाया है, अतः यह वर्गीकरण अपूर्ण व अधूरा है ।

इन सबका विवरण अपेक्षित है ।

4.14. शब्दावली

वर्गीकरण	-	Classification
आकृतिमूलक वर्गीकरण	-	Morphological Classification
पारिवारिक वर्गीकरण	-	Genealogical or Historical Classification
योगात्मक भाषाएँ	-	Aggulative languages
उपसर्ग	-	Prefix
परसर्ग	-	Post position
प्रत्यय	-	Suffix
व्युत्पत्ति	-	Derivation
शब्द समूह	-	Vocabulary
पदात्मक	-	Morphological
रूपात्मक	-	Typical
वाक्यात्मक	-	Syntactical
अश्लिष्ट योगात्मक भाषाएँ	-	Simple Aggulative languages
श्लिष्ट योगात्मक भाषाएँ	-	Inflecting languages
प्रश्लिष्ट योगात्मक भाषाएँ	-	Incorporating or polysynthetical languages
पूर्ण योगात्मक	-	Prefix Aggulative
मध्य योगात्मक	-	Infix Aggulative
पूर्वान्त योगात्मक	-	Prefix suffix Aggulative

अंत योगात्मक	-	Suffix Aggulative
आंशिक योगात्मक	-	Partially Aggulative
अंतर्मुखी श्लिष्ट योगात्मक	-	Internal Inflectional
बहिर्मुखी श्लिष्ट योगात्मक	-	External Inflectional
संयोगात्मक	-	Synthetical
वियोगात्मक	-	Analytical
पूर्ण प्रश्लिष्ट योगात्मक	-	Completely incorporating
आंशिक प्रश्लिष्ट योगात्मक	-	Partially incorporating

4.15. संदर्भ ग्रन्थ एवं निबंध

1. पाणिनीय शिक्षा
2. An Introduction to Discriptive Linguistics - H.A.Greorson
3. तुलनात्मक भाषा शास्त्र - डॉ.मंगल देव शास्त्री
4. भाषा-विज्ञान एवं भाषा शास्त्र - डॉ.कपिल देव द्विवेदी
5. भाषा विज्ञान और हिन्दी भाषा
6. भाषा विज्ञान प्रवेश - डॉ.भोलानाथ तिवारी
7. भारतीय भाषा-विज्ञान - डॉ.किशोरी प्रसाद वाजपेयी
8. भाषा रहस्य-डॉ.श्याम सुन्दर दास
9. सामान्य भाषा-विज्ञान - डॉ.बाबूराम सक्सेना
10. भाषा-विज्ञान की भूमिका - डॉ.देवेन्द्रनाथ शर्मा

निबंध

1. भाषाओं का वर्गीकरण - डॉ. मिताली भट्टाचारजी ।

NOTES

Karnataka State Open University

Mukthagangothri, Mysore - 570 006

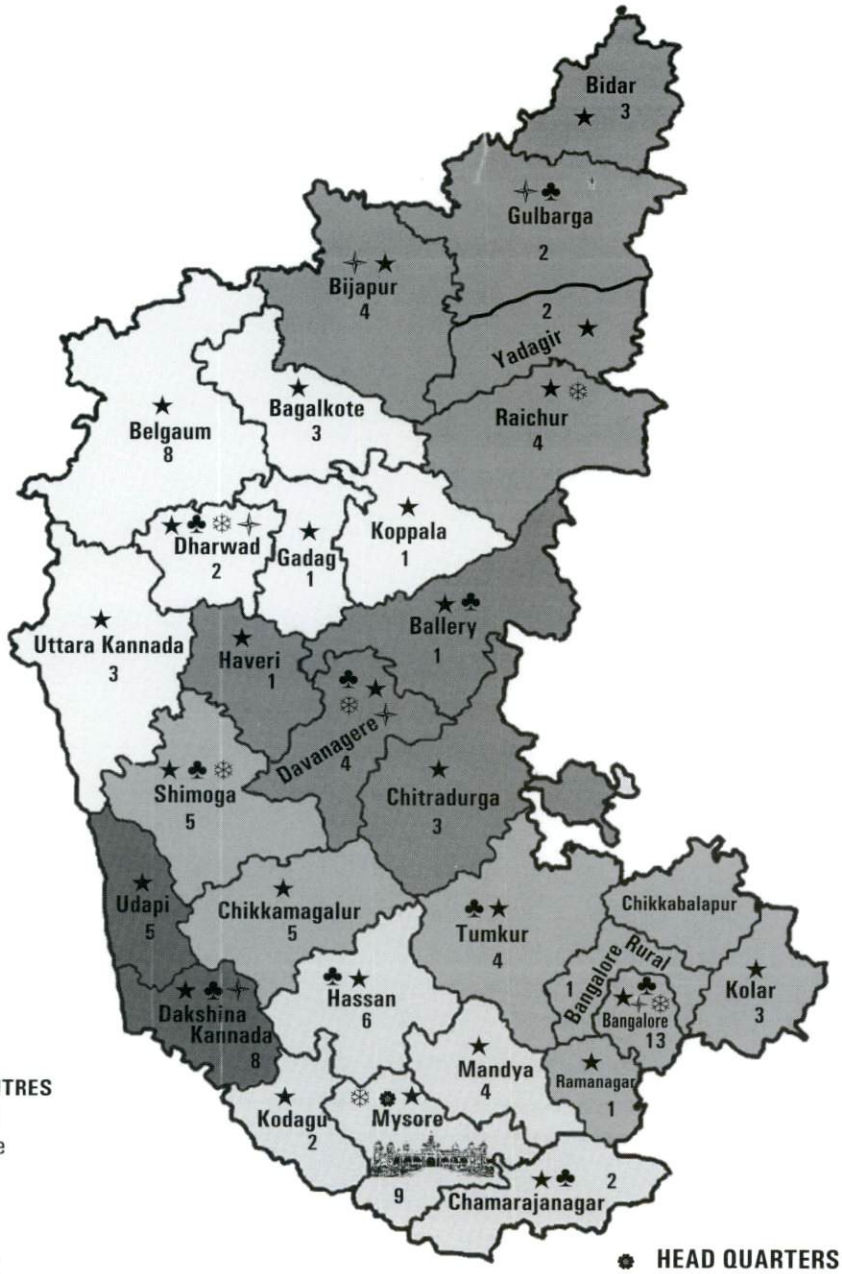

♣ **REGIONAL CENTRES**

Bangalore
Davanagere
Gulbarga
Dharwad
Shimoga
Mangalore
Tumkur
Hassan
Chamarajanagar
Bellary

HEAD QUARTERS
Total Study Centres : 111
Regional Centres : 10
B.Ed Study Centres : 10
M.Ed Study Centres : 08

ಆದೇಶ ಸಂಖ್ಯೆ : ಕ.ರಾ.ಮು.ವಿ./ಅ.ಸಾ.ವಿ./4-061/2013-2014 ದಿನಾಂಕ : 23.12.2013
ಒಳಪುಟ :60 GSM ಮ್ಯಾಪ್ಲಿತೊ ಕಾಗದ ಮತ್ತು ರಕ್ಷಾಪುಟ :170 GSM ಮ್ಯಾಟ್ ಆರ್ಟ್ ಕಾರ್ಡ್
ಮುದ್ರಕರು :ವಿನಾಯಕ ಆಫ್‌ಸೆಟ್ ಪ್ರಿಂಟರ್ಸ್, ಬೆಂಗಳೂರು–560 070 ಪ್ರತಿಗಳು :1600

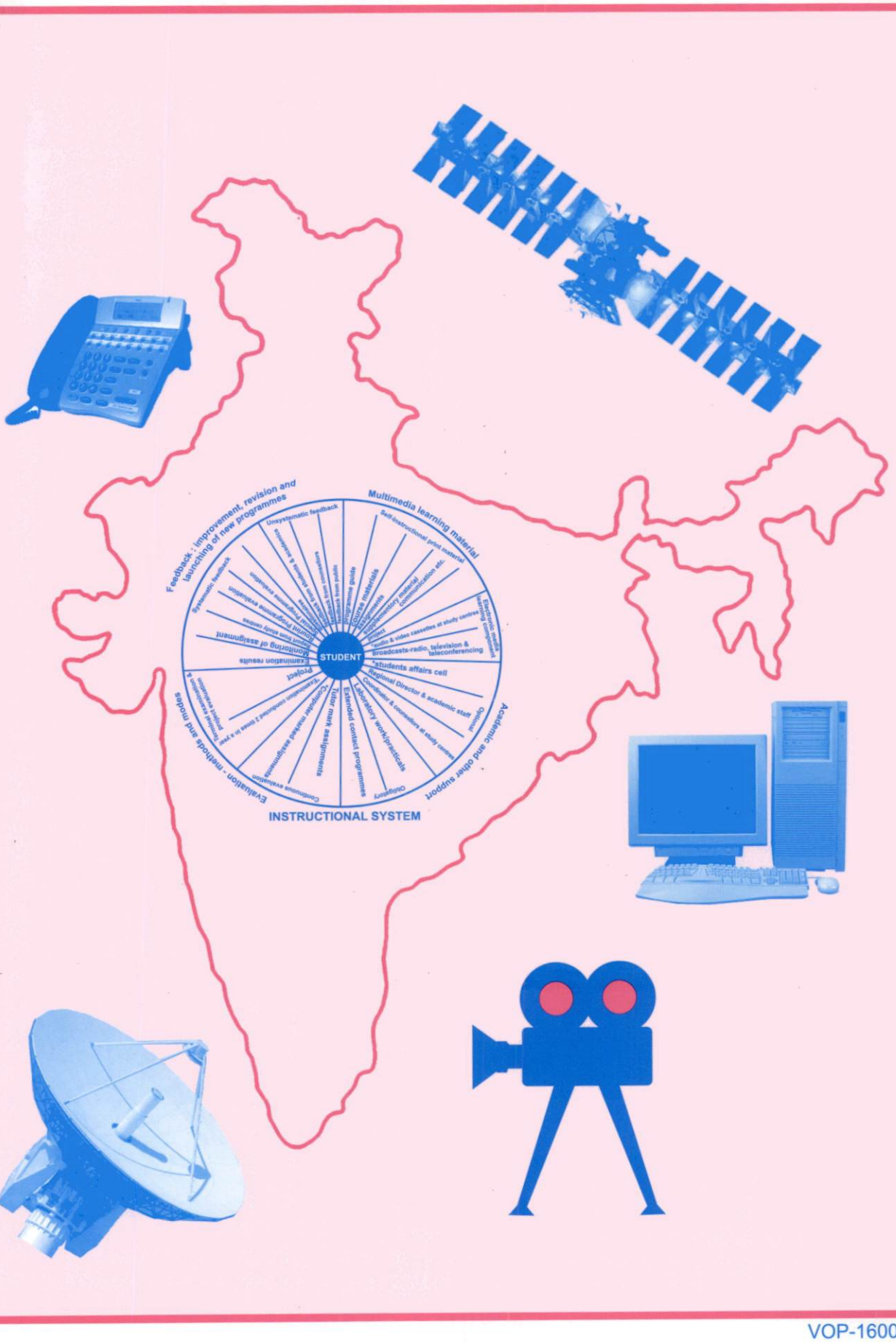
Multimedia learning material
Academic and other support
Evaluation - methods and modes
Feedback : improvement, revision and launching of new programmes
STUDENT
INSTRUCTIONAL SYSTEM